2.4

पाठ्यचर्या नवीकरण के लिए

शिक्षक-शिक्षा

राष्ट्रीय फोकस समूह

का

आधार पत्र

2.4

पाठ्यचर्या नवीकरण के लिए

शिक्षक-शिक्षा

राष्ट्रीय फोकस समूह

का

आधार पत्र

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-81-7450-954-3

प्रथम संस्करण
अप्रैल 2009 बैसाख 1931

PD 3T NSY

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2009

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन सी ई आर टी के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
होस्डेकेरे हेली एक्सटेंशन
बनाशंकरी III स्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

रु 25.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा बंगाल ऑफसैट वर्क्स, 335, खजूर रोड, करोलबाग, नयी दिल्ली 110 005 द्वारा मुद्रित।

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग : *पेय्यटि राजाकुमार*
मुख्य उत्पादन अधिकारी : *शिव कुमार*
मुख्य संपादक : *श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक : *गौतम गांगुली*
संपादक : *नरेश यादव*
उत्पादन : *अरुण चितकारा*

सज्जा एवं आवरण
श्वेता राव

सार-संक्षेप

1960 के दशक (कोठारी आयोग, 1964-66) से ही शिक्षकों की पेशेवर तैयारी को शिक्षा के गुणात्मक विकास के लिए आवश्यक माना गया, लेकिन पिछले तीन दशकों में इसके क्रियान्वयन की दिशा में कुछ ही ठोस कदम उठाए गए।

चट्टोपाध्याय समिति (1983-85) ने टिप्पणी की कि "...हमारे अधिकांश शिक्षण महाविद्यालयों और प्रशिक्षण संस्थानों में साधन अत्यंत अपर्याप्त हैं..." "अगर शिक्षक-शिक्षा को नए शिक्षक की भूमिका और दायित्वों के संदर्भ में प्रासंगिक बनाना है तो माध्यमिक स्तर के शिक्षक के प्रशिक्षण की अवधि... बारहवीं की पढ़ाई पूरी करने के बाद कम से कम पाँच साल होनी चाहिए।" इसकी आवश्यकता पर पुनः ज़ोर देते हुए समिति ने कथन दिया कि "...इससे सामान्य शिक्षा और पेशेवर शिक्षा को एक साथ लेना आसान ...हो सकता है...", समिति ने सिफ़ारिश की कि "...शुरुआत, चार साल के एकीकृत कार्यक्रम से की जा सकती है..."

यशपाल समिति की रिपोर्ट **शिक्षा बिना बोझ के** (1993) में लिखा है कि "शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की कमी के कारण स्कूलों में शिक्षण की गुणवत्ता असंतोषजनक रही है। स्कूली शिक्षा में हुए परिवर्तनों के संदर्भ में इस कार्यक्रम की प्रासंगिकता को सुनिश्चित करने के लिए इसकी विषयवस्तु का पुनः निर्माण किया जाये। इन कार्यक्रमों में इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि प्रशिक्षणार्थी स्व-अधिगम तथा स्वतंत्र चिंतन की योग्यता प्राप्त कर सके।"

इसलिए, आदर्शवादी या सिद्धांतवादी ढंग से पाठ्यचर्या में बदलाव के द्वारा भारत में विद्यालयी शिक्षा को पुनर्जीवित करने में कम ही सफलता मिलेगी, यदि उसमें शिक्षकों का केंद्रीय महत्त्व पहचाना नहीं जाएगा।

शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम एक ऐसी शिक्षा-व्यवस्था की जरूरतों के अनुसार शिक्षकों को निरंतर प्रशिक्षित करने का कार्य करते रहे हैं जिसमें शिक्षा को मात्र सूचना के हस्तातंरण की प्रक्रिया में देखा जाता है और सीखने का अर्थ पाठ्यपुस्तकों से रटकर जैसे का तैसा बोलना और लिख लेना लगाया पाता है।

औपचारिक विद्यालयी व्यवस्था के अंतर्गत बड़े पैमाने पर अस्थायी शिक्षकों की भर्ती और सेवा-पूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रमों के प्रति लापरवाही वाला दृष्टिकोण राज्य द्वारा दी जाने वाली प्रारंभिक शिक्षा का अंतरंग हिस्सा बन चुके हैं। इससे शिक्षक की पेशेवर के रूप में पहचान हलकी हुई है और इसने सरकारी विद्यालयी व्यवस्था और समुदायों के उस विश्वास का भी क्षरण किया है जिसमें शिक्षक को बदलाव लाने वाली मजबूत कड़ी के रूप में देखा जाता था।

सेवा-पूर्व और सेवाकालीन शिक्षक-शिक्षा में संबंध बनाने के लिए बहुत ही कम प्रयासों के साथ ही शिक्षकों की वास्तविक आवश्यकताओं पर भी ध्यान नहीं दिया गया है। स्कूली शिक्षक विशेषकर वे जो प्रारंभिक विद्यालयों में हैं, उच्च शिक्षा केन्द्रों से कटे हुए हैं तथा बौद्धिक रूप से अलग-थलग हैं।

वर्तमान शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों का खाका और दस्तूर कुछ पूर्व निर्धारित मान्यताओं पर आधारित है, जो शिक्षकों के विचारों तथा पेशेवर एवं व्यक्तिगत विकास को बाधित करता है। उदाहरण

के लिए, यह मान लिया गया है कि अनुशासनात्मक ज्ञान 'प्रदत्त' होता है जो प्रशिक्षु सामान्य शिक्षा से पाते हैं और जो शिक्षाशास्त्र में पेशेवर प्रशिक्षण से अलग होता है।

पारंपरिक शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम शिक्षकों को इसके लिए प्रशिक्षित करते हैं कि वे निम्न माध्यमों से वर्तमान व्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुकूल हो सके: (क) मानकीकृत ढाँचे के अंतर्गत अध्यायों की सावधानीपूर्वक योजना। (ख) एक निश्चित संख्या में अध्यायों को कक्षा में पढ़ाना और उनमें निरीक्षण की प्रथा। (ग) स्कूल की सभाओं और अन्य दैनंदिन गतिविधियों को पूरा करने की प्रथा। (घ) आवश्यक संख्या में प्रोजेक्ट और अभ्यास पूरा करने की परिपाटी। 'शिक्षक-प्रशिक्षण के दौरान पाठ-योजना को पढ़ाया जाना एक औपचारिक दिनचर्या होती है जो धीरे-धीरे युवा प्रशिक्षुओं को इस पेशे की ओर ले जाती है। इसकी खूबी यह है कि न तो यह ज्ञान और पाठ्यचर्या संबंधी पूर्व-निर्धारित मान्यताओं को आघात पहुँचाती है और न ही इस पेशे में आए नये सदस्यों को इन अवधारणाओं और इन पर आधारित व्यवहारों के परिणामों से अवगत कराती है।

आजादी से पहले (1) गिजुभाई बधेका (1920), (2) रवींद्रनाथ टैगोर, और (3) महात्मा गांधी द्वारा प्रयास किए गए। उनके नवोन्मेषों का उद्देश्य एक विशेष स्तर की शिक्षा पर पूरी तरह से ध्यान देना रहा। ये सभी नवाचार सफलतापूर्वक आजमाए गए और सीखने के लिए अपने पीछे एक समृद्ध परंपरा छोड़ गए।

स्वाधीनता के बाद एन.सी.ई.आर.टी. ने 60 के दशक में अपनी तरफ़ से पहल करते हुए अपने चार क्षेत्रीय कॉलेजों के शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों में कुछ नवोन्मेष अपनाए। लेकिन वे नवोन्मेष उन संस्थाओं से बाहर नहीं जा सके। 1968 में, वेदछी के गांधी विद्यापीठ में एक व्यक्ति द्वारा सेवानिवृत्ति तक कुछ नवोन्मेष हुए जिसको एक व्यक्ति-आधारित कार्यक्रम माना गया जो और लोग नहीं कर सकते। 1981 में एक प्रसिद्ध गैर सरकारी संगठन ने मानव के आध्यात्मिक विकास को ध्यान में रखकर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों को शिक्षित करने का एक प्रयास किया जिसमें स्कूल के विद्यार्थियों तथा शिक्षक-विद्यार्थियों के लिए सहभागिता के साथ सीखने वाला तरीका अपनाया गया। यह भी उसी संस्थान तक सीमित रहा। 1994 में लोगों के एक दल ने विशेषज्ञों, शिक्षाविदों, कार्यकर्ताओं आदि से बातचीत के आधार पर मौलाना अबुल कलाम आज़ाद सेंटर फॉर एलीमेंटरी एंड सोशल एजुकेशन, नयी दिल्ली के लिए प्रारंभिक स्तर के शिक्षकों को शिक्षित करने का एक निराला कार्यक्रम शुरू किया, जो पिछले दस सालों से चल रहा है और जिसे अभी तक किसी ने नहीं अपनाया है। 1997 से वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान में माध्यमिक स्तर के शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का सहभागितापूर्ण स्व-अधिगम पर आधारित नवाचार जारी है। परंतु यह भी सिर्फ़ उस संस्थान तक ही सीमित है।

इन सारे नवाचारों के अध्ययन ने समूह को कायल कर दिया कि वह इस सहभागितापूर्ण स्व-अधिगम आधारित शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम को प्रत्येक स्तर पर चलाए जाने वाले शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में ग्रहण किए जाने की संस्तुति करे।

दर्शन

शिक्षक-शिक्षा को विद्यालयी व्यवस्था की ज़रूरतों के प्रति ज़्यादा संवेदनशील होना चाहिए। इसके लिए शिक्षकों को निम्नांकित दोहरी भूमिका निभाने के लिए तैयार करना पड़ेगा–

- शिक्षण-अधिगम परिस्थितियों में प्रोत्साहन तथा सहयोग देकर मानवीय ढंग से प्रक्रिया को आगे बढ़ाने वाले के रूप में जो शिक्षार्थियों को उनकी प्रतिभाओं की खोज करने में तथा उनकी शारीरिक एवं बौद्धिक क्षमताओं को पूर्ण रूप से पहचानने के योग्य बनाए, तथा इस योग्य भी कि वे चरित्र के साथ-साथ सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों का विकास कर जिम्मेदार नागरिक के रूप में उभरे।
- व्यक्तियों के समूह के एक सक्रिय सदस्य के रूप में जो बदलती हुई सामाजिक तथा शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विद्यालयी पाठ्यचर्या के नवीकरण की प्रक्रिया में योगदान के लिए सचेतन प्रयास करे। ऐसा करते समय वह अतीत में लिए अपने अनुभवों तथा उन सरोकारों और अनिवार्यताओं को ध्यान में रखे जो राष्ट्रीय विकास के बदलते लक्ष्यों और बदलती शैक्षिक प्राथमिकताओं के प्रकाश में उभरे हैं।

ये अपेक्षाएँ सुझाती हैं कि शिक्षक एक वृहत् संदर्भ में कार्य करता है जिसकी गतिशीलता और सरोकार उस पर प्रभाव डालते हैं। कहने का तात्पर्य है कि शिक्षक को शिक्षा के सामाजिक संदर्भों के प्रति संवेदनशील और जवाबदेह होना चाहिए। साथ ही उसे शिक्षार्थियों की अलग-अलग पृष्ठभूमियों और वृहत् राष्ट्रीय तथा वैश्विक संदर्भों; समता, समानता, सामाजिक न्याय और उत्कृष्टता के लक्ष्यों की प्राप्ति के राष्ट्रीय सरोकारों के प्रति भी संवेदनशीलता जागृत करनी चाहिए।

इन अपेक्षाओं पर खरा उतरने के लिए शिक्षक-शिक्षा में ऐसे लक्षणों का समावेश होना चाहिए जो शिक्षार्थियों अर्थात् शिक्षक-शिक्षार्थियों को इस योग्य बनाएँ कि वे

- बच्चों/शिक्षार्थियों की देखभाल कर सकें तथा उनकी संगति में रहना पसंद करें।
- बच्चों को उनके सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक संदर्भों के साथ समझें।
- अधिगम को व्यक्तिगत अनुभवों से अर्थ निकालने की प्रक्रिया मानें।
- उन तरीकों को समझें जिससे बच्चे सीखते हैं, वे संभव तरीके खोजें जिनके द्वारा बच्चों के अधिगम हेतु अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान की जा सकें, साथ ही यह भी समझें कि शिक्षार्थियों में सीखने के प्रकार, तरीकों और गति के संदर्भ में विभिन्नताएँ होती हैं।
- ज्ञान की उत्पत्ति को चिंतनशील अधिगम की निरंतर उभरती प्रक्रिया के रूप में देखें।
- ज्ञान को पाठ्यपुस्तक प्रदत्त बाह्य यथार्थ के रूप में न देखें वरन् उसे शिक्षण-अधिगम के साझा संदर्भों और व्यक्तिगत अनुभवों द्वारा गढ़ा हुआ मानें।
- सामाजिक, व्यावसायिक और प्रशासनिक संदर्भों, जिसमें कार्य करना है, के प्रति संवेदनशील रहें।

- ग्रहणशील और लगातार सीखने की प्रक्रिया में संलग्न रहें, समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझें और एक बेहतर विश्व के लिए काम करें
- ऐसी उपयुक्त दक्षताओं का विकास कर सकें जो उन्हें इस योग्य बनाएँ कि वे न केवल वास्तविक परिस्थितियों में उपरोक्त समझ प्राप्त करें बल्कि ऐसी ही परिस्थितियों का निर्माण भी कर सकें।
- मजबूत ज्ञान-आधार तथा मूल भाषिक दक्षता हासिल कर सकें।
- अपने स्व को समझें, व्यक्तिगत आकांक्षाओं, क्षमताओं और रुझानों को पहचानें।
- सजग रूप से अपना पेशेवर रुझान इस तरह बनाएँ कि जिससे स्थिति विशिष्ट संदर्भ में शिक्षक के रूप में उनकी भूमिका का निर्धारण हो सके।

नये शिक्षक-प्रशिक्षण के माध्यम से ऐसे शिक्षक तैयार करने के लिए उसमें शामिल किए जाने चाहिए :

- विद्यार्थियों के साथ जुड़ने, बातचीत करने, उनका अवलोकन करने तथा उनके साथ कार्य करने के अवसर।
- स्व-अधिगम, चिंतन तथा नये विचारों को सामने रखने के लिए अवसर; स्व-निर्देशित अधिगम के लिए दक्षताओं तथा सोचने की योग्यता का विकास, खुद के लिए आलोचनात्मक होने तथा समूह में कार्य करने जैसी योग्यताओं का भी विकास।
- स्व और अन्य की समझ के अवसर (जिसमें अपनी मान्यताएँ, पूर्व मान्यताएँ और संवेदनाएँ शामिल हैं); आत्म-विश्लेषण, स्व-मूल्यांकन, अनुकूलीकरण, लचीलापन, रचनात्मकता और नवोन्मेष की योग्यता का विकास।
- समझ और ज्ञान को बढ़ाने के साथ-साथ विषयगत ज्ञान और सामाजिक यथार्थ के परीक्षण, विषय वस्तु को समाज के साथ जोड़ने के तथा आलोचनात्मक चिंतन का विकास करने के अवसर।
- शिक्षण, निरीक्षण, दस्तावेज़ीकरण, विश्लेषण, नाटक, शिल्प, कथावाचन और चिंतनशील जाँच के अवसर।

शिक्षक-शिक्षा का प्रस्तावित नया कार्यक्रम

- सहभागिता आधारित स्व-अधिगम के तरीके सीखने पर जोर देता है जो विद्यार्थियों के सामाजिक संदर्भों के साथ-साथ सामुदायिक और राष्ट्रीय संदर्भों में स्थित हो।
- यह विद्यार्थियों और विद्यार्थी-शिक्षकों की स्व-अधिगम क्षमता में पूर्ण विश्वास जताता है और शिक्षा के लिए उपयुक्त शैक्षिक कार्यक्रम के निर्माण पर बल देता है।
- सीखने वाले को अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय सहभागी के रूप में देखता है। तथा यह बताता है कि उसकी क्षमताओं या सामर्थ्य को स्थिर रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि यह समझना चाहिए कि अनुभव के साथ उसमें विकास की संभावना निहित है।

- शिक्षक को विद्यार्थी को सीखने की प्रक्रिया में सहयोगी और प्रोत्साहित करने वाले की भूमिका में देखता है।
- ज्ञान को केवल पुस्तकों में स्थिर रूप में न देखकर विभिन्न प्रकार के अनुभवों की निर्मिति के रूप में देखता है। इसका निर्माण वाद-विवाद, मूल्यांकन, विश्लेषण, तुलना, आदि जैसी क्रियाओं से अन्त:क्रिया के माध्यम से होता रहता है।
- इस प्रकार की प्रशिक्षण प्रक्रिया में मूल्यांकन प्रक्रिया सतत होगी, स्व-मूल्यांकन तथा सहयोगी छात्रों द्वारा किया जाने वाला मूल्यांकन भी शामिल होगा। विद्यार्थियों का मूल्यांकन शिक्षक-प्रशिक्षक द्वारा किया जाएगा और औपचारिक भी होगा।

ऊपर दिए गए संक्षिप्त विवरण के आधार पर कोई समझ सकता है कि :

- नया शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम (पाठ्यचर्या)निश्चित एवं पूर्वनिर्धारित नहीं हो सकता।
- विधियाँ निश्चित नहीं हैं।
- विद्यार्थियों की इच्छा के अनुसार अध्ययन के सभी पहलू निर्धारित होंगे।
- विद्यार्थियों की प्रकृति के हिसाब से सीखने के अलग-अलग माध्यम एवं तरीके तय किए जाएँगे।

फिर भी, इसका एक मोटे तौर पर खाका इस तरह हो सकता है-

- किस प्रकार के व्यक्तिगत और सामूहिक कार्य अनुभव दिए जाएँ, इस विषय पर सोचा जाएगा।
- किस प्रकार का मार्गदर्शन, प्रोत्साहन, सहयोग ज़रूरी होगा (कोई और रूप भी हो सकता है), इसे कैसे दिया जा सकता है यह भी सोचा जाएगा।
- स्व-अधिगम की प्रक्रिया में किस प्रकार की संसाधनगत सुविधाओं की आवश्यकता होगी यथा, पुस्तकालय, ई.टी. उपकरण, आई.सी.टी. सेवाएँ आदि, इन पर भी विचार किया जाएगा।
- ऐसे अभिप्रेरित लोगों का समूह तैयार करने की बात पर विचार किया जाएगा जो प्रयोग करने में दिलचस्पी रखते हों और जो इस प्रकार के शिक्षक-प्रशिक्षण को लागू करने की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हों।

हम नये शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं की सूची बना सकते हैं जो पूर्वनिर्धारित तो है परंतु इसमें आदेशात्मक पक्ष नहीं है। इनके विस्तृत ब्योरे कार्यक्रम लागू किए जाते वक्त तैयार किए जा सकते हैं।

राष्ट्रीय फोकस समूह
पाठ्यचर्या नवीकरण के लिए शिक्षक-शिक्षा
के सदस्यों के नाम

प्रो. दमयन्ती जे. मोदी (अध्यक्ष)
2209, ए-2, कृष्णानगर, आनंदहेरा
हिल ड्राइव, भावनगर-364002
गुजरात

प्रो. जे.सी. सोनी
विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग एवं
डीन, शिक्षा संकाय
अरुणाचल विश्वविद्यालय
इटानगर-791112
अरुणाचल प्रदेश

प्रो. आशा पांडेय
शिक्षा विभाग
बनारस हिंदू विश्वविद्यालय
कमच्छा, वाराणसी-221005
उत्तर प्रदेश

प्रो. पूनम बत्रा
मौलाना आजाद प्रारंभिक एवं सामाजिक शिक्षा केंद्र
केंद्रीय शिक्षा संस्थान
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-110007

प्रो. दुलाल मुखोपाध्याय
कल्याणी विश्वविद्यालय
कल्याणी, जिला नदिया-741235
पश्चिम बंगाल

प्रो. भारती बवेजा
केंद्रीय शिक्षा संस्थान
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-110007

प्रो. एम.एस. यादव
सी-3/3039, वसंत कुंज
नयी दिल्ली-110070

प्रो. टी.के.एस. लक्ष्मी
डीन, शिक्षा संकाय
वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली
राजस्थान-304022

प्रो. मोहित चक्रवर्ती
सीमांतिका, सीमांतोपल्ली
शांति निकेतन-731235
पश्चिम बंगाल

प्रो. कुलदीप कुमार
1-207, कीर्ति अपार्टमेंट्स
मयूर विहार विस्तार
नयी दिल्ली-110092

डॉ. प्रणति पांडा
प्रवाचक, अध्यापक शिक्षा और
विस्तार विभाग
एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली-110016

डॉ. ज्योतिभाई देसाई
नहर के पास, गांधी विद्यापीठ के सामने
सदस्य वेदछी, वालोद (तालुक)
जिला सूरत-394641
गुजरात

श्रीमती उषा मुरुगन
प्राचार्य, गांधी शिक्षण भवन
श्रीमती सुरजबा कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन
जुहू रोड, मुम्बई-400049
महाराष्ट्र

प्रो. एस.के. यादव (सदस्य सचिव)
अध्यापक शिक्षा और विस्तार विभाग
एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली-110016

आमंत्रित सदस्य
श्री बेगुर एस. रामचंद्रा राव
परियोजना अधिकारी, शिक्षा
यूनाइटेड नेशंस चिल्ड्रेन फंड
19, पारसी पंचायत रोड
अंधेरी (पूर्व), मुंबई-400069

डॉ. इंदु पंडित
माननीय प्रोफेसर एवं भूतपूर्व प्राचार्य
एच. जे. कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन
खार, मुंबई-400052, महाराष्ट्र

डॉ. प्रतिभा पारीख
प्रवाचक, शिक्षा विभाग
गांधी शिक्षण भवन
श्रीमती सुरजबा कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन
जुहू, मुंबई - 400049, महाराष्ट्र

प्रो. तलत अज़ीत
इंस्टिट्यूट ऑफ़ एडवांस्ड स्टडीज़ इन
एजुकेशन (आई.ए.एस.ई.)
शिक्षा संकाय, जामिया मिलिया इस्लामिया
जामिया नगर, नयी दिल्ली-110025

डॉ. डी. डी. यादव
प्रवाचक
अध्यापक शिक्षा और विस्तार विभाग
(डी.टी.ई.ई.)
एन.सी.ई.आर.टी.
नयी दिल्ली-110016

सुश्री फराह फारूकी
व्याख्याता, प्राथमिक शिक्षा विभाग
लेडी श्रीराम कॉलेज
लाजपत नगर
नयी दिल्ली

डॉ. दिशा नवानी
व्याख्याता, प्राथमिक शिक्षा विभाग
गार्गी कॉलेज
सीरी फोर्ट रोड
नयी दिल्ली

सुश्री मनीषा डबास
अदिति महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

डॉ. प्रभजोत कुलकर्णी
प्राचार्य, महर्षि वाल्मीकि कॉलेज
ऑफ़ एजुकेशन
दिल्ली-110092

सुश्री सी. सुभाषिणी
गार्गी कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

अनुवाद सहयोग

1. श्री प्रभात रंजन, 93, एम्स एपार्टमेंट, मयूर विहार, दिल्ली-110093
2. डॉ. राज रानी, प्रवाचक, शिक्षा और विस्तार विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली-110016
3. श्री मनोज मोहन, एल.पी./डी., पीतमपुरा, दिल्ली-110088
4. डॉ. रंजना अरोड़ा, प्रवाचक, पाठ्यचर्या समूह, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली-110016

बॉक्स सूची

बॉक्स 1 : क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयों, एन.सी.ई.आर.टी. (1960) का माध्यमिक शिक्षक-शिक्षा का चार-वर्षीय एकीकृत कार्यक्रम

बॉक्स 2 : माध्यमिक शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम, गांधी विद्यापीठ : वेदछी, गुजरात (1968)

बॉक्स 3 : होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम (एच.एस.टी.पी.): शिक्षक-प्रशिक्षण, एकलव्य, मध्य प्रदेश (1982)

बॉक्स 4 : प्रारंभिक शिक्षक-शिक्षा : एक एकीकृत उपागम; मीरांबिका, श्री अरविंद शिक्षण सोसायटी, नयी दिल्ली (1983)

बॉक्स 5 : प्रारंभिक शिक्षक-शिक्षा का चार-वर्षीय एकीकृत कार्यक्रम : बी.एल.एड, एम.ए.सी.ई. एस.ई. से शिक्षा संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय (1994)

बॉक्स 6 : 'अन्वेषण अनुभव' : सहभागी शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम : बी.एड. (संवर्धित), शिक्षा विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान (1997)

बॉक्स 7 : विस्तृत शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम, गांधी शिक्षण भवन, शिक्षा महाविद्यालय, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई (2000)।

विषय-सूची

सार संक्षेप ...v

राष्ट्रीय फोकस समूह 'पाठ्यचर्या नवीकरण के लिए शिक्षक-शिक्षा' के सदस्यों के नाम ...x

1. प्रस्तावना ...2

2. सेवा-पूर्व शिक्षक-शिक्षा : एक संक्षिप्त विवरण ...3

3. सेवाकालीन शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम : एक संक्षिप्त आकलन ...4

4. शिक्षक-शिक्षा : व्यवस्थागत चिंताएँ और आवश्यकताएँ ...6

4.1 स्कूली शिक्षकों की पेशेवर पहचान को बेहतर बनाए जाने की आवश्यकता ...6

4.2 शिक्षक के सेवा-पूर्व और सेवाकालीन प्रशिक्षण के बीच सार्थक संबंध बनाने की आवश्यकता ...6

4.3 पेशेवर रूप से दक्ष शिक्षक-प्रशिक्षकों की आवश्यकता ...7

4.4 शिक्षक-शिक्षा का ढाँचा और व्यवहार : कुछ अंतर्निहित धारणाएँ ...8

5. शिक्षक-शिक्षा में हुए नवाचारों के उदाहरण : नयी दृष्टि विकसित करने का आधार ...9

5.1 स्वतंत्रता-पूर्व काल में नवाचार ...9

5.2 स्वतंत्रता के बाद के नवाचार ...10

6. शिक्षक-शिक्षा : नयी दृष्टि ...17

6.1 दृष्टि ...17

6.2 नवकल्पित शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में आवश्यक फोकस ...18

6.2.1 अधिगम (सीखना) ...18

6.2.2 विद्यार्थी ...18

6.2.3 शिक्षक ...19

6.2.4 ज्ञान ...20

6.2.5 सामाजिक संदर्भ ...21

6.2.6 मूल्यांकन ...22

7. नए शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम के लिए आवश्यक समझे जाने वाले कार्य ...22

8. अनुशंसाएँ ...25

9. उपसंहार ...26

परिशिष्ट-I ...27

पशु विद्यालय

एक समय की बात है–समाज की लगातार बढ़ती जटिलता का सामना करने के लिए जानवरों ने तय किया कि कुछ किया जाना चाहिए। उन्होंने आपस में बैठक की और अंततः एक स्कूल शुरू करने की बात पर सभी सहमत हुए।

पाठ्यचर्या में दौड़ना, पेड़ों पर चढ़ना, तैरना और उड़ना शामिल था। चूँकि ज़्यादातर ये विशेषताएँ जानवरों में मौजूद होती हैं, इसलिए उन्होंने यह निर्णय लिया कि सभी विद्यार्थी ये सभी विषय लेंगे।

बतख तैरने में सबसे आगे थी– बल्कि अपने शिक्षक से भी आगे। वह उड़ने में भी अच्छी थी– लेकिन दौड़ने में बहुत खराब रही। चूँकि वह इस विषय में कमज़ोर थी इसलिए उसे अभ्यास के लिए छुट्टी के बाद रोका गया। यहाँ तक कि उसे कुछ दिनों के लिए तैरना भी छोड़ना पड़ा क्योंकि उसे दौड़ने के लिए अधिक समय चाहिए था। उसने दौड़ने का खूब अभ्यास किया और अंततः उसके जालीदार पैर बुरी तरह घायल हो गए। परिणामतः वह तैरने में भी औसत स्तर पर आ गई। लेकिन औसत से स्कूल को कोई परहेज नहीं था, इसलिए सिवाय बतख के किसी को इस बात का दुःख नहीं था।

इसी तरह खरगोश ने दौड़ने में टॉप किया, लेकिन तैरने में औसत प्रदर्शन के लिए किए गए जबरन अभ्यास ने उसे लगभग पागल कर दिया। तैरने से उसे नफ़रत थी।

गिलहरी– पेड़ों पर चढ़ने में सबसे माहिर थी, लेकिन उड़ने में औसत प्रदर्शन के लिए किए गए प्रयास ने उसे भी मानसिक स्तर पर लगभग पंगु कर दिया। लेकिन उड़ने का प्रयास तब तक कराया जाता रहा जब तक वह पूरी तरह थक नहीं गई। परिणाम हुआ चढ़ने में सी और दौड़ने में डी ग्रेड के स्तर तक गिर गई।

चील– अनुशासन के मामले में मुसीबत करने वाली साबित हुई थी। पेड़ के ऊपर तक चढ़ने में तो वह सबको पीछे छोड़ जाती, लेकिन उसका चढ़ने का अपना तरीका था, और परीक्षा के बीच में वह अपना यह तरीका छोड़ने को तैयार नहीं थी।

बिल खोदने वाले जानवर विद्यालय के बाहर रहे और उस टैक्स के लिए लड़े जो उन पर शिक्षा के लिए लगाया गया था क्योंकि जमीन खोदना पाठ्यचर्या में नहीं था। उन्होंने अपने बच्चों को बिज्जू के पास पढ़ने के लिए भेजा और बाद में उन्होंने वैकल्पिक शिक्षा के लिए एक प्राइवेट विद्यालय शुरू किया।

1. प्रस्तावना

स्कूली पाठ्यचर्या के नवीकरण के प्रयास को ऐसी शिक्षा-व्यवस्था को स्थापित करने के नीतिगत संदर्भ में रखना चाहिए जो भारतीय समाज की संवैधानिक दृष्टि के अनुकूल मूल्यों व परिवर्तनोमुखी उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक हो। शिक्षा बहुत समय से लोगों का सामाजिक बहिष्करण करने के साधन के रूप में काम करती रही है, इस तरह से इसने विषमता को खत्म करने व बेहतर समाज-निर्माण के संविधान के उद्देश्यों को प्राप्त करने में बाधा का ही काम किया है। पाठ्यचर्या नवीकरण की आवश्यकता इसलिए है कि आज भी हमारी शिक्षा-व्यवस्था में शिक्षक को 'सूचना प्रदान करने वाला' और विद्यार्थियों को चारदीवारी से घिरे बंद कक्ष में, चुपचाप बिना किसी प्रतिक्रिया के उन सूचनाओं को प्राप्त करने वाले के रूप में ही देखा जा रहा है।

हमारी शिक्षा की सबसे बड़ी समस्या है, इसके द्वारा बच्चों पर लादा गया बोझ। यह बोझ पाठ्यचर्या की असंबद्ध संरचना का परिणाम तो है ही जिसे बच्चों के जीवन और उनकी संस्कृति से कोई मतलब नहीं होता, परंतु साथ ही यह शिक्षक की अपर्याप्त तैयारी का भी परिणाम है। वे बच्चों से ठीक से नहीं जुड़ पाते हैं और न ही बच्चों की ज़रूरत के अनुसार अपनी तरफ़ से रचनात्मक एवं ज़रूरी पहल करते हैं। हमारी शिक्षा व्यवस्था में जहाँ बच्चे को पर्याप्त जगह देने की बात स्वीकार की जा रही है, वहीं शिक्षकों को अभी भी उचित जगह नहीं दी जा रही है। उन्हें ज्ञान उत्पन्न करने और सोचने वाले पेशेवर के रूप में देखा जाना ज़रूरी है। उनका सबलीकरण इस हद तक तो ज़रूरी है कि वे बच्चे के द्वारा घर व परिवेश में सीखे गए अनुभवों को पहचान तथा महत्त्व दे सकें और तदनुसार उसे खोजने, सीखने व विकसित होने का अवसर प्रदान कर सकें।

इसलिए पाठ्यचर्या नवीकरण का हमारा यह प्रयास शिक्षकों को अलग ढंग से प्रशिक्षित करने की ज़रूरत को रेखांकित करता है, ताकि वे समता व सामाजिक परिवर्तन के प्रश्नों पर उचित पहलकदमी कर सकें। स्कूली शिक्षा में परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इसी संदर्भ में चट्टोपाध्याय आयोग ने कहा, "यदि स्कूली शिक्षकों से उम्मीद की जाती है कि वे पढ़ाने के उपागम में क्रांति लाएँ तो वह क्रांति पहले शिक्षा के कॉलेजों में होनी चाहिए।"[1]

यह आधार पत्र शिक्षक-शिक्षा हेतु गठित समस्त आयोगों की रिपोर्टों और नीति दस्तावेज़ों में शिक्षक की तैयारी के संबंध में दिए गए परिप्रेक्ष्य और कार्यक्रम संबंधी दिशानिर्देशों के संक्षिप्त अवलोकन से शुरू होता है। इसके बाद गौण स्रोतों से प्राप्त शिक्षक-शिक्षा क्षेत्र संबंधी तात्कालिक मुद्दों तथा साथ ही फोकस समूह के सदस्यों एवं आमंत्रित पणधारियों (स्टेक होल्डर्स) के शिक्षा संबंधी विचार-विमर्श से उत्पन्न विचारों को भी स्थान देता है। ये मुद्दे व्यवस्थागत कमियों तथा आवश्यकताओं एवं शिक्षक-शिक्षा के कार्यक्रमों तथा तरीकों की अकादमिक प्रकृति तथा डिजाइन को परिलक्षित करते हैं। इसके बाद इस आधार पत्र में शिक्षकों की शिक्षा तथा व्यावसायिक विकास संबंधी कुछ नवाचारों का संक्षिप्त विवरण उनसे सीखे जाने वाले सबक के साथ दिया गया है। इन पर आधारित एक दृष्टिपूर्ण वक्तव्य दिया गया है जो शिक्षक-शिक्षा के वर्तमान प्रतिमानों तथा अभ्यासों में बदलाव के मूल बिंदुओं को प्रदर्शित करता है। यह दर्शन उस सामान्य ढाँचे को प्रस्तुत करता है जिसके अंतर्गत सेवा-पूर्व तथा सेवाकालीन शिक्षकों को तैयार किया जा सकता है। आधार पत्र के अंतिम भाग में फोकस समूह की संस्तुतियों तथा विचारार्थ मूल मुद्दों को प्रस्तुत किया गया है।

2. सेवा-पूर्व शिक्षक-शिक्षा : एक संक्षिप्त विवरण

शिक्षक-शिक्षा को हमारे देश में शुरू हुए सौ साल से ऊपर

---

1. *शिक्षक एवं समाज, चट्टोपाध्याय कमेटी रिपोर्ट (1983-85), मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ-48*

हो गए। 1850 में स्कूली शिक्षकों के लिए शिक्षक-प्रशिक्षण अध्ययन का एक अभिन्न हिस्सा था। बाद में भारतीय शिक्षा आयोग (1884) के सुझाव के बाद भिन्न-भिन्न शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किए गए और स्नातकों के लिए कम अवधि का पाठ्यक्रम बनाया गया।[2] बीसवीं सदी के दौरान स्कूल की विभिन्न अवस्थाओं के मद्देनज़र जिनमें शिक्षकों से पढ़ाने की अपेक्षा की जाती है, इस कार्यक्रम में और अधिक विविधताएँ लाई गईं और उन पर अमल किया गया। साथ ही प्रशिक्षण के तरीकों में भी बदलाव किए गए मसलन, प्रशिक्षण के साथ-साथ स्कूल में व्यवहारत: पढ़ाना, पत्राचार व संपर्क कार्यक्रम और अब शिक्षक-शिक्षा के लिए दूरस्थ शिक्षा वाले कार्यक्रम भी। इन बदलावों के बावजूद इन कार्यक्रमों की मूलभूत विशेषताओं और सैद्धांतिक आधार में बड़ा बदलाव न के बराबर पाया गया। हालाँकि समय-समय पर नयी ज़रूरतों को ध्यान में रखा गया लेकिन इनका प्रभाव मुख्यधारा की शिक्षक-शिक्षा पर बहुत ज़्यादा नहीं पड़ा। शिक्षक-शिक्षा की काफ़ी आलोचनाएँ हुईं जो नीति दस्तावेज़ों और विभिन्न आयोगों की रिपोर्टों में देखने को मिलती हैं। 1974-98 के दौरान इस क्षेत्र में किए गए शोध बताते हैं कि शिक्षक-शिक्षा की विषय-वस्तु, दिए जाने वाले अनुभव तथा अपनाई गई विधियों में किसी तरह का बदलाव नहीं हुआ।

साठ के दशक (कोठारी आयोग 1964-66) से ही यह बात की जाने लगी कि शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करना अत्यंत ज़रूरी है। लेकिन इसके लिए वास्तव में पिछले तीन दशकों में बहुत ही कम प्रयास हुए। यह देश में शिक्षा की बिगड़ती व्यवस्था का मुख्य कारण हो सकता है। शिक्षक-शिक्षा की जरूरत पर ध्यान देते हुए आयोग लिखता है, "... शिक्षक-शिक्षा को एक तरफ़ विश्वविद्यालयों की अकादमिक मुख्यधारा में और दूसरी ओर स्कूली जीवन तथा शैक्षिक विकास में लाने की बात पर ज़ोर दिया जाए।"[3] यह बात निश्चित रूप से चिंताजनक है कि शिक्षक-शिक्षा के केंद्र एकदम से अलग-थलग हैं, यहाँ तक कि उस विश्वविद्यालयी व्यवस्था के भीतर भी, जिसमें ये स्थित है। गुणवत्ता को शिक्षक-शिक्षा की आत्मा घोषित करते हुए आयोग ने सुझाव दिया कि "विश्वविद्यालयों में सामान्य व पेशेवर शिक्षा के समाकलित पाठ्यक्रम (इंटीग्रेटेड कोर्स) पढ़ाए जाएँ ... जिसमें स्वाध्याय और चर्चा... तथा... इंटर्नशिप के विस्तृत कार्यक्रम का महत्त्वपूर्ण स्थान हो।"[4]

तत्पश्चात, शिक्षकों पर राष्ट्रीय आयोग संबंधी चट्टोपाध्याय समिति रिपोर्ट (1983-85) ने नए शिक्षक की अभिकल्पना उस रूप में की जो विद्यार्थियों से इस तरह का संवाद कायम करता है जिसमें बताया जाता है "... राष्ट्रीय अखंडता और एकता की भावना का महत्त्व; वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता; अपने काम में उत्कृष्टता के लिए प्रतिबद्ध रहना और अपने समाज के लिए चिंतित होना।"[5] आयोग ने यह देखा कि ''...लगभग सभी शिक्षण महाविद्यालयों और प्रशिक्षण संस्थानों में जो मिलता है वह शोचनीय रूप से अपर्याप्त है...।" "अगर शिक्षक-शिक्षा को नए शिक्षक की भूमिका और दायित्वों के संदर्भ में प्रासंगिक बनाना है तो माध्यमिक स्तर के शिक्षक के प्रशिक्षण की अवधि 12वीं के बाद कम से कम पाँच वर्ष की होनी चाहिए..."[6] इसकी आवश्यकता बताते हुए आयोग ने लिखा कि "...इससे सामान्य और व्यावसायिक शिक्षा को एकसमान भाव से आगे चलाया जा सकता है...", आयोग ने सिफ़ारिश की कि "...आरंभ में हम चार सालों की एकीकृत शिक्षा का कार्यक्रम आरंभ कर सकते हैं जिसे सावधानीपूर्वक तैयार किया जाना

---

2. *हंटर शिक्षा आयोग (1881-1884)*
3. *शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964-66) 'शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास', शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 622*
4. *शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964-66) 'शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास', शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 623*
5. *शिक्षक एवं समाज, चट्टोपाध्याय कमेटी रिपोर्ट, मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, पृ. 48*
6. *शिक्षक एवं समाज, चट्टोपाध्याय कमेटी रिपोर्ट, मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, पृ. 49*

चाहिए ..., यह भी संभव हो सकता है कि वर्तमान में चल रहे विज्ञान एवं कला के कुछ कॉलेज अपने कार्यक्रमों के साथ शिक्षा विभाग शुरू करें और अपने कुछ विद्यार्थियों से शिक्षक-शिक्षा के अध्ययन के लिए कहें।"[7] चट्टोपाध्याय समिति ने माध्यमिक और प्राथमिक शिक्षा के लिए चार साल के एकीकृत कार्यक्रम की सिफ़ारिश की।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986-92) ने इस बात पर ध्यान दिया कि "शिक्षकों को नवाचार के लिए तथा समुदाय की ज़रूरतों, सरोकारों को क्षमताओं के मुताबिक संचार और गतिविधियों के लिए उपयुक्त विधियों को ईजाद करने की आज़ादी होनी चाहिए।"[8] इस नीति में आगे कहा गया कि "शिक्षक-शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है, और इसके सेवा-पूर्व और सेवाकालीन अवयव आपस में जुड़े होने चाहिए। सबसे पहले, शिक्षक-शिक्षा की प्रक्रिया में ही आमूल-चूल परिवर्तन किया जाना चाहिए।"[9] राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की समीक्षा करते हुए आचार्य राममूर्ति समिति (1990) ने कहा कि शिक्षक-शिक्षा में इंटर्नशिप (अंत:शिक्षुता) का ढाँचा अपनाया जाना चाहिए क्योंकि "...इंटर्नशिप का ढाँचा पूरी तरह से वास्तविक परिस्थिति में किए गए व्यावहारिक अनुभव के प्राथमिक मूल्य पर आधारित होता है, जिसमें कुछ समय के लिए शिक्षण का अवसर देकर अध्यापन के गुणों के विकास का अवसर दिया जाता है।"[10]

'शिक्षा बिना बोझ के' यशपाल समिति की रिपोर्ट (1993) ने माना कि "...शिक्षकों की तैयारी के अपर्याप्त अवसर से स्कूल में अध्ययन-अध्यापन की गुणवत्ता प्रभावित होती है... इन कार्यक्रमों की विषयवस्तु इस प्रकार पुनर्निर्धारित की जानी चाहिए कि स्कूली शिक्षा की बदलती आवश्यकताओं के संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता बनी रहे। इन कार्यक्रमों में प्रशिक्षुओं में स्व-शिक्षण और स्वतंत्र चिंतन की क्षमता के विकास पर ज़ोर होना चाहिए।"[11]

3. सेवाकालीन शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम : एक संक्षिप्त आकलन

इसी प्रकार के सरोकार शिक्षकों के सेवाकालीन प्रशिक्षण को लेकर भी हैं। हालाँकि यह ध्यान देने की बात है कि सेवाकालीन कार्यक्रमों का आधार समय-समय पर शिक्षा के समक्ष आने वाली चुनौतियों और आवश्यकताओं के अनुरूप होता है। कुल मिलाकर, अधिक से अधिक ये कार्यक्रम विशिष्ट चुनौतियों के संदर्भ में जागरूकता कार्यक्रम के रूप में देखे जा सकते हैं न कि शिक्षक विकास कार्यक्रमों के रूप में, जैसी कि इनकी कल्पना की गई थी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के बाद शिक्षकों के अभिमुखीकरण ने बड़े पैमाने पर ज़ोर पकड़ा। पिछले कुछ वर्षों में धीरे-धीरे संस्थानों जैसे ज़िला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डिस्ट्रिक्ट इंस्टीट्यूट ऑफ़ एजुकेशन एंड ट्रेनिंग-डाइट), उच्चतर शिक्षा अध्ययन संस्थान (इंस्टीट्यूट ऑफ़ एडवांस्ड स्टडीज़ इन एजुकेशन–आई.ए.एस.ई.) तथा शिक्षक-शिक्षा महाविद्यालयों (कॉलेज ऑफ़ टीचर एजुकेशन–सी.टी.ई.) के बीच नेटवर्क बनाने के प्रयास किए गए हैं। जिसके पीछे उद्देश्य रहा प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयी शिक्षकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण देना। अभी तक देश भर में लगभग 500 डाइट, 87 सी.टी.ई. और 38 आई.ए.एस.ई. तथा 30 एस.सी.ई.आर.टी. संस्थानों की स्थापना शिक्षकों के प्रशिक्षण के संसाधन संस्थानों के रूप में की जा चुकी है। आई.ए.एस.ई. और सी.टी.ई. के मामले में गिने-चुने कॉलेजों ने ही माध्यमिक

---

7. शिक्षक एवं समाज चट्टोपाध्याय कमेटी रिपोर्ट, मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, पृ. 49

8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1992), मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, पृ. 43

9. वही, पृ. 44

10. 'प्रबुद्ध और मानवोचित समाज की ओर' आचार्य राममूर्ति रिव्यू कमेटी रिपोर्ट (1990), मा. सं. वि. मं., भारत सरकार

11. 'शिक्षा बिना बोझ के' यशपाल कमेटी रिपोर्ट (1993), मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, पृ. 26

स्तर के शिक्षकों के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किया है। पिछले दशक के दौरान सेटेलाइट इंटरेक्टिव टेलिविजन पर आधारित गतिविधियों के प्रयोग से जिला प्राथमिक शिक्षा परियोजना (डिस्ट्रीक्ट प्राइमरी एजुकेशन प्रोजेक्ट–डी.पी.ई.पी.) और एस.ओ.पी.टी. योजना के हिस्से के रूप में शिक्षकों को अपने कौशल सुधारने के अवसर मिले। हालाँकि उनमें से ज़्यादातर पुराने ढर्रे पर ही चल रहे हैं। (एन.सी.ई.आर.टी. 2004)

प्रशिक्षण की गुणवत्ता का बड़ा संकेतक शिक्षक के लिए उसकी आवश्यकता और प्रासंगिकता है। हालाँकि, ज़्यादातर प्रशिक्षण कार्यक्रम शिक्षकों की आवश्यकताओं के अनुसार आयोजित नहीं किए जाते और उनमें संसाधनों का उचित प्रयोग नहीं किया जाता।[12] अधिकतर इनसेट कार्यक्रमों का ढाँचा व्याख्यान आधारित रहा है और सीखने वालों के लिए इसमें सहभागिता के कुछ खास अवसर नहीं होते।[13] दुर्भाग्यपूर्ण ढंग से गतिविधि आधारित शिक्षण, आनंददायक शिक्षण, बड़ी कक्षाओं के लिए कक्षा प्रबंधन, टीम टीचिंग, सहयोगी और सहकारी अधिगम जिसमें प्रदर्शन और सहभागिता प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, इन्हें अकसर व्याख्यान के माध्यम से ही पढ़ाया जाता है।

प्रभावी सेवाकालीन प्रशिक्षण द्वारा स्कूल के ढर्रे में बड़े पैमाने पर और महत्त्वपूर्ण बदलाव लाए जा सकते हैं, इस बात को ज़्यादातर शिक्षा समितियों और आयोगों ने माना है। उन्होंने वर्तमान सेवाकालीन प्रशिक्षण की कमियों और उपेक्षा को लेकर अपनी चिंताएँ भी व्यक्त की हैं। शिक्षा आयोग (1964-66) ने कड़ी सिफ़ारिश की थी कि:

1. शिक्षकों के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण के कार्यक्रमों का आयोजन बड़े पैमाने पर हर स्तर पर विश्वविद्यालयों और शिक्षक संगठनों द्वारा किया जाना चाहिए और हर शिक्षक के लिए हर पाँच साल की सेवा के बाद दो या तीन महीने का सेवाकालीन प्रशिक्षण अनिवार्य किया जाना चाहिए।
2. सतत सेवाकालीन प्रशिक्षण शोध के आँकड़ों के आधार पर हो।
3. प्रशिक्षण संस्थानों को वार्षिक आधार पर काम करना चाहिए और पुनश्चर्या कार्यक्रम, परिसंवाद, कार्यशालाओं और ग्रीष्मचर्याओं का आयोजन करते रहना चाहिए।[14]

शिक्षक संबंधी राष्ट्रीय आयोग (1983-85) की रिपोर्ट ने इस ओर ध्यान दिलाया कि सेवाकालीन शिक्षा को लेकर ठोस नीति और प्राथमिकताओं का अभाव है और साथ ही शिक्षक भी आवश्यकताओं को व्यवस्थित ढंग से नहीं पहचान पाता है। इसने शिक्षकों की सेवाकालीन शिक्षा के लिए 'समय से आगे की योजना', और 'पद्धतियों की गहन समीक्षा' की सिफ़ारिश की। इसने इसकी अनुशंसा भी की कि सेवाकालीन शिक्षा की रणनीति "काल्पनिक, स्पष्ट और विविध" हो। इसमें आगे कहा गया है कि "इनमें से सबसे प्रभावकारी सेवा को स्कूल परिसर (कॉम्पलैक्स) के माध्यम से संगठित किया जाए। स्कूल परिसर का विचार कोठारी आयोग द्वारा दिया गया... जिसका मतलब था... कि प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों को जोड़ा जाए और इनके संसाधनों और प्रक्रियाओं का मिलकर प्रयोग किया जाए।'' आयोग ने शिक्षक केंद्र का भी विचार दिया जिसे "...शिक्षकों के लिए बैठक/संगोष्ठी के स्थान के रूप में विकसित किया जा सकता है जो किसी एक स्कूल में हो जहाँ शिक्षक अपने संसाधनों और शैक्षिक प्रक्रियाओं को साझा कर सके।'' यह एक ऐसा मंच हो सकता है जहाँ सभी विषयों के शिक्षकों के लिए व्यावहारिक प्रकृति की कार्यशालाएँ आयोजित की जा सकें। अलग-अलग स्कूलों के अच्छे शिक्षकों को वहाँ

---

12. श्रीवास्तव, ए. बी. एल. (1999), स्टडी ऑफ़ सपोर्ट सिस्टम एंड प्रोसेस भिच अंडरपिंस डी.पी.ई.पी. पेडागॉजिकल स्ट्रेटजी इन सिक्स स्टेट्स: ए सिंथेसिस रिपोर्ट, एड. सिल: नयी दिल्ली।

13. सेठी, महेंद्रनाथ (2001), 'ए स्टडी ऑफ़ मैनेजमैंट ऑफ़ मल्टीग्रेड टीचिंग प्रैक्टिस' इन प्राइमरी स्कूल्स ऑफ़ क्योंझार डिस्ट्रिक्ट एण्ड, इट्स इम्पैक्ट ऑफ़ टीचर ट्रेनिंग ऑन मल्टीग्रेड, उड़ीसा, डी.पी.ई.पी., डी.आई.ई.पी. क्योंझार

14. शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964 - 66)–'शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास', शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 622

जानकार के तौर पर बुलाया जा सके और यहाँ पुस्तक मेलों का आयोजन भी हो।'' शिक्षकों के लिए सबसे ज़्यादा आवश्यक स्कूल के माहौल में बदलाव लाया जाना है। उनके लिए एक ऐसा माहौल ज़रूरी है जो शैक्षिक शोध और निरीक्षण को बढ़ावा दे... कुछ चुने हुए शिक्षकों को फैलोशिप के ज़रिए शिक्षावकाश पर, अपनी पेशेवर दक्षता के विकास के लिए उच्च अध्ययन केंद्रों में भेजा जा सकता।"[15]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) जो शिक्षा के लिए मील का पत्थर साबित हुई, के अनुसार सेवारत शिक्षक-शिक्षा को सेवा-पूर्व शिक्षा से सतत रूप से जोड़ा जाना चाहिए।[16] शिक्षक-शिक्षा को पुनः संरचित तथा मजबूती प्रदान करने वाली केंद्र द्वारा प्रायोजित योजना को बनाया तथा इस दिशा में लागू किया गया है। इस योजना में हर जिले में डाइट स्थापित किए जाने की योजना है, साथ ही 250 शिक्षा महाविद्यालयों का दर्जा बढ़ाकर शिक्षक-शिक्षा महाविद्यालय बनाने, शिक्षा के 50 उच्च अध्ययन केंद्र खोलने और एस.सी.ई.आर.टी. को मजबूत किए जाने की भी बात की गई है।

आचार्य राममूर्ति समीक्षा समिति (1990) ने स्पष्ट रूप से कहा कि 'सेवाकालीन शिक्षा और पुनश्चर्या का संबंध शिक्षक की विशिष्ट आवश्यकताओं से होना चाहिए। सेवाकालीन शिक्षा शिक्षक के विकास की भविष्य की आवश्यकताओं पर आधारित हो और मूल्यांकन और फॉलो-अप को उसका हिस्सा बनाया जाए।'[17]

4. शिक्षक-शिक्षा : व्यवस्थागत चिंताएँ और आवश्यकताएँ

नीति दस्तावेज़ों और आयोग की रिपोर्टों में शिक्षकों की सक्रिय भूमिका की बात बार-बार किए जाने के बावजूद पिछले तीस सालों से शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम उसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षकों को प्रशिक्षण दे रहा है जिसमें शिक्षा को सूचनाओं के प्रसार और अधिगम को पाठ्यपुस्तकों से पुनर्उत्पादित माना जाता है। यह पाठ्यचर्या के ढाँचे में आवधिक परिवर्तनों में लगातार झलकता है जिसमें बड़े पैमाने पर जड़वत् शिक्षक समुदाय को पुनः गति देने की दिशा में कुछ खास नहीं होता।

4.1 स्कूली शिक्षकों की पेशेवर पहचान को बेहतर बनाए जाने की आवश्यकता

पारंपरिक शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम के लगातार खराब प्रदर्शन और लोकनिवेश पर ज़ोर बढ़ने के कारण 1990 के दशक के आरंभ से शिक्षक-प्रशिक्षण और शिक्षकों की नियुक्ति के कई वैकल्पिक उपाय आजमाए गए; जिनको व्यावहारिक और प्रशासनिक आधारों पर तो उचित ठहराया जा सकता है पर भारतीय कक्षा की वास्तविकताओं से उसका कोई खास संबंध नहीं रहता। औपचारिक स्कूल व्यवस्था में बड़े पैमाने पर वैकल्पिक शिक्षकों की नियुक्ति[18] और सेवा-पूर्व प्रशिक्षण से बचने की प्रवृत्ति राज्य द्वारा दी जाने वाली प्रारंभिक शिक्षा का अनिवार्य हिस्सा बन चुकी है। इस तरह के शिक्षकों की नियुक्ति के मामले में कई बार न्यूनतम योग्यता को भी कम कर दिया जाता है। इस प्रवृत्ति ने शिक्षक की एक पेशेवर के रूप में पहचान को प्रभावित किया है और इस भावना का क्षरण किया है कि शिक्षक नामक संस्था सरकारी स्कूल व्यवस्था और समुदायों में बदलाव का वाहक बन सकती है। इसको बदलने के लिए बड़े पैमाने पर ठोस उपाय अपनाए जाने की ज़रूरत है।

4.2 शिक्षक के सेवा-पूर्व और सेवाकालीन प्रशिक्षण के बीच सार्थक संबंध बनाने की आवश्यकता

1990 के दशक के ज़्यादातर प्रयास प्रारंभिक स्तर पर शिक्षकों के 'सेवाकालीन प्रशिक्षण को लेकर रहे हैं। उदाहरण के लिए डी.पी.ई.पी. के अंतर्गत शिक्षकों का सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम तीन से लेकर बीस दिनों

---

15. शिक्षक एवं समाज, चट्टोपाध्याय कमेटी रिपोर्ट (1983-85), मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, पृ. 48

16. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) मा. सं. वि. मं., भारत सरकार, नयी दिल्ली

17. 'प्रबुद्ध और मानवोचित समाज की ओर' आचार्य राममूर्ति रिव्यू रिपोर्ट (1990), मा. सं. वि. मं., भारत सरकार

18. दया राम (2000) 'प्राथमिक शिक्षा में पैरा शिक्षक: एक स्टेटस रिपोर्ट', एड. सिल, नयी दिल्ली

तक का होता था और उसमें विविध विषयों पर बात की जाती थी परंतु शिक्षण अधिगम प्रक्रिया पर कम बल दिया जाता था। "शिक्षक-प्रशिक्षण के संबंध में ग्यारह डी.पी.ई.पी. राज्यों (पहले चरण और दूसरे चरण) में सूचनाएँ अपर्याप्त और बिखरी हुई हैं।"[19] इन प्रशिक्षणों के प्रभाव को अभी तक समझा नहीं जा सका है जबकि वृहत् संरचना को तैयार करने में काफ़ी निवेश किया गया।

इस तरह की कम अवधि के प्रशिक्षण कार्यक्रमों से जो बड़ा नुकसान हुआ वह यह था कि सेवा-पूर्व और सेवाकालीन शिक्षक-शिक्षा की खाई पहले से और चौड़ी हो गई। ये दोनों अलग-अलग द्वीपों के रूप में काम करते रहे जबकि सच्चाई यह है कि दोनों ही माध्यमिक शिक्षा के लिए विश्वविद्यालय विभागों में एक साथ होते हैं और दोनों पर ही देश में ज़िला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों की ज़िम्मेदारी होती है।

1986 की नयी शिक्षा नीति के बाद केंद्र द्वारा प्रायोजित एक कार्यक्रम आरंभ हुआ जिसमें उच्चतर शिक्षा अध्ययन संस्थान खोले गए और विश्वविद्यालयी शिक्षा विभागों को (बी.एड. और एम.एड. के कोर्स शुरू कर) अपग्रेड किया गया ताकि माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के लिए सेवारत प्रशिक्षण शुरू हो सके। आई.ए.एस.ई. के लिए प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में भी कार्य करना अनिवार्य था।[20] यह लक्ष्य अभी भी पूरा होना बाकी है जो कि दसवीं पंचवर्षीय योजना में दोहराया गया है। एक बड़ा प्रयास इस दिशा में यह हुआ है कि संशोधित उच्च शिक्षा अध्ययन केंद्र के रूप में दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में प्रारंभिक और सामाजिक शिक्षा के लिए मौलाना आजाद केंद्र की स्थापना की गई। यह एकमात्र उच्च शिक्षा अध्ययन केंद्र है जहाँ प्रारंभिक शिक्षा की दिशा में कुछ ठोस काम हुआ है जिससे 1994 में यहाँ बैचलर ऑफ़ एलीमेंट्री एजुकेशन का पाठ्यक्रम शुरू किया गया।[21] केंद्र की योजना के अंतर्गत जिला स्तर पर डाइट की स्थापना प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रमुख संस्थानों के रूप में की गई। मूल्यांकन अध्ययनों से पता चला है कि डाइट द्वारा चलाए जानेवाले सेवापूर्व और सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में आपस में कोई संबंध नहीं होता और न ही शिक्षकों की पेशेवर दक्षता को विकसित करने की दिशा में उसने कुछ खास ऊर्जा दिखाई है।

सेवा-पूर्व और सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण में कोई संबंध न होने के कारण स्कूली शिक्षकों की समस्या आज तक अनुत्तरित ही है। स्कूल शिक्षक, विशेषकर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों को उच्च शिक्षा केंद्रों में बौद्धिक दृष्टि से अलग-थलग रखकर देखा जाता है। परिणामस्वरूप पाठ्यचर्या विकास में शिक्षकों की वैचारिक मदद लेने का चलन ही नहीं है। इसका बड़ा कारण शिक्षकों के लिए शोध और अकादमिक सुविधाओं का अभाव होना है। एस.सी.ई.आर.टी. से लेकर डाइट और ब्लॉक और सामुदायिक स्तर पर स्थापित संस्थाओं को इस प्रकार सक्षम बनाए जाने की आवश्यकता है ताकि ये आपस में विचारों का आदान-प्रदान कर सकें, कक्षागत अभ्यासों का साझा कर सकें तथा विषय-वस्तु और शिक्षाशास्त्रीय सिद्धांत के संदर्भ में ज्ञान आधार में बढ़ोतरी कर सकें।[22]

4.3 पेशेवर रूप से दक्ष शिक्षक-प्रशिक्षकों की आवश्यकता

पेशेवर शिक्षक-प्रशिक्षक तैयार करने की भी कोई स्थायी व्यवस्था नहीं है, विशेषकर पूर्व-प्राथमिक और प्राथमिक स्तर पर। पूर्व-प्राथमिक स्तर और प्राथमिक स्तर के

---

19. *जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में शैक्षिक प्रगति एवं सुधार की समीक्षा (फेस - I और II), साउथ एशियन ह्यूमेन डेवलपमेंट सेक्टर, डिस्कशन पेपर सीरीज 2003, विश्व बैंक पृ.35*
20. *प्रोग्राम फॉर इंप्रूवमेंट ऑफ़ सेकंडरी टीचर एजुकेशन इंस्टिट्यूट्स: सेलेंट फीचर्स एंड गाइडलाइंस फॉर प्रोजेक्ट फॉरम्यूलेशन, 1987, एड. सिल. नयी दिल्ली*
21. *वर्किंग ग्रुप रिपोर्ट ऑन एलीमेंटरी एंड एडल्ट एजुकेशन: टेंथ फाइव इयर प्लान 2002-2007. डिपार्टमेंट ऑफ़ एलीमेंटरी एजुकेशन एंड लिटरेसी, मा. सं. वि. मं., नयी दिल्ली*
22. *'जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में शैक्षिक प्रगति एवं सुधार की समीक्षा (फेस-I एंड II), साउथ एशियन ह्यूमेन डेवलपमेंट सेक्टर, डिस्कशन पेपर सीरीज 2003, विश्व बैंक पृ. 35*

ज़्यादातर शिक्षक-प्रशिक्षक स्वयं माध्यमिक स्तर के लिए प्रशिक्षित होते हैं।[23] एम. एड. जैसे शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम बहुत से विश्वविद्यालयों में शिक्षा में उदार अध्ययन पाठ्यक्रम बनकर रह गए हैं। ये शिक्षा में गहरे विमर्श को बढ़ावा देने और अंतर्विषयी जाँच-पड़ताल के लिए अवसर देने में अपर्याप्त हैं। परिणामस्वरूप, शिक्षक-शिक्षा का प्रभावी लोकाचार प्रत्यक्षवादी उपागम तक ही सीमित है जो शैक्षिक मनोविज्ञान के क्लासिकल स्कूल ऑफ़ थॉट से आता है और जिसका संबंध उन बड़ी संख्या में होने वाले नवाचारी प्रयोगों से कम ही है जो 1980 से ही पूरे देश में मशरूम की तरह फैल गए।

4.4 शिक्षक-शिक्षा का ढाँचा और व्यवहार : कुछ अंतर्निहित धारणाएँ

वर्तमान शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम का अभिकल्पन और पद्धति कुछ पूर्व धारणाओं पर आधारित हैं जो शिक्षकों के विचारों, पेशे और व्यक्तिगत विकास को बाधित करते हैं। वे इस प्रकार हैं:

- उदाहरण के लिए यह माना जाता है कि अनुशासनात्मक ज्ञान 'प्रदत्त' होता है, जिसे प्रशिक्षु सामान्य शिक्षा के माध्यम से 'प्राप्त' करते हैं और वे शिक्षाशास्त्र के पेशेवर प्रशिक्षण से स्वतंत्र होते हैं। यह विभेद इस सामान्य बोध (शिक्षक-प्रशिक्षकों में भी) के रूप में प्रकट होता है कि कक्षा पाँच में गणित पढ़ाने वाले शिक्षक को प्राथमिक स्तर से ज़्यादा के गणित को पढ़ने या समझने की आवश्यकता नहीं है अर्थात् गणित वह उतना ही जाने जितना उसे पढ़ाना है। कोठारी आयोग (1964-66) ने सामान्य और व्यावसायिक शिक्षा को एक करने की अनुशंसा की थी, जिस पर चट्टोपाध्याय आयोग का भी ज़ोर था, उस पर आज तक ध्यान नहीं दिया गया है जिसके कारण एक पीढ़ी के करोड़ों विद्यार्थियों पर इसका प्रभाव पड़ा है।
- शिक्षक-शिक्षा के कार्यक्रम में यह आमतौर पर माना जाता है कि विद्यार्थी शिक्षक का भाषा ज्ञान और निपुणता (जिस भाषा में उसे पढ़ाना है) पर्याप्त है इसलिए यह प्रशिक्षकों की चिंता का विषय नहीं होना चाहिए। जबकि अनुभव बताते हैं कि शिक्षकों द्वारा प्रयोग की जाने वाली भाषा में दक्षता बढ़ाने की ज़रूरत है (बेशक यह अंग्रेज़ी हो या क्षेत्रीय भाषा) इसलिए भाषा निपुणता का पाठ्यक्रम सेवा-पूर्व प्रशिक्षण का महत्त्वपूर्ण हिस्सा होना चाहिए। इसके पश्चात् सेवा में रहते हुए एक सहायक कार्यक्रम के रूप में।
- ऐसा माना जाता है 'अलग-अलग पाठों के शिक्षण' (एक निश्चित संस्था में) का बार-बार अभ्यास शिक्षक बनने के लिए दिए जाने वाले प्रशिक्षण के लिए पर्याप्त है। यह भी माना जाता है कि बाल विकास सिद्धांत और अधिगम के बीच संबंध, अनुदेशात्मक प्रतिरूप और विशेष विषयों को पढ़ाने के तरीके अपने आप ही विद्यार्थी-शिक्षक की समझ का हिस्सा बन जाते हैं। परंतु राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय अनुभव इस तरह की अवधारणाओं को चुनौती देते हैं। इसलिए शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों को पाठ्यक्रम के इस तरह के डिज़ाइन तैयार करने चाहिए जो इस तरह के संबंधों के बारे में गहरी समझ उत्पन्न करने की जगह बना सकें।
- शिक्षक-शिक्षा के वर्तमान कार्यक्रमों में स्कूली पाठ्यक्रम में निहित ज्ञान की अवधारणा को उसी रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। विद्यार्थी-शिक्षक को पाठ्यचर्या ढाँचे को आलोचनात्मक ढंग से परखने की इज़ाज़त नहीं होती है क्योंकि यह मान लिया जाता है कि... "पूरी स्कूली पाठ्यचर्या या अलग-अलग विषयों के पाठ्यक्रम में बुनियादी तौर पर कोई कमी नहीं है। यह भी मान्यता है कि अगर पाठ्यपुस्तक में कोई समस्या है तो उसे शिक्षक-शिक्षा के दौरान दूर नहीं किया जा सकता है। इसलिए शिक्षकों को वास्तविक यथार्थ के साथ जीना सीख लेना चाहिए।"[24]
- ऐसा भी माना जाता है कि शिक्षक आसानी से

---

23. फीजीबिलिटी स्टडी फॉर ए प्रोफेशनल डिग्री प्रोग्राम ऑफ़ एजुकेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ़ डेल्ही, फ़रवरी 1993 पृ. 26

24. कृष्ण कुमार, द विज़न (2001) द बैचलर ऑफ़ एलीमेंटरी एजुकेशन: प्रोग्राम ऑफ़ स्टडी, एम.ए.सी.ई.एस.ई., डिपार्टमेंट ऑफ़ एजुकेशन, दिल्ली विश्वविद्यालय।

विद्यार्थियों, ज्ञान और सीखने संबंधी अपने पूर्वाग्रहों, विश्वासों तथा मान्यताओं को परे कर उसी तरह ग्रहण कर लेंगे जैसा उन्हे सिखाया जाएगा। विधियों के पाठ्यक्रम के द्वारा ज़्यादातर शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम शिक्षकों को बदलाव के वाहक रूप में तैयार नहीं कर पाते क्योंकि ये कक्षा में सीखने की प्रक्रिया में विद्यार्थी-अध्यापकों को अपने अनुभवों तथा मान्यताओं पर चिंतन करने के अवसर नहीं देते। यह एक बुनियादी बदलाव है जो एन.सी.ई.आर.टी. के पाठ्यचर्या नवीकरण अभ्यास के द्वारा संभव किया जा सकता है।

- पारंपरिक शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम शिक्षकों को वर्तमान व्यवस्था में समायोजन के लिए निम्नलिखित द्वारा तैयार करता है–

(क) पाठ को मानकीकृत ढंग से पढ़ाने की सतर्क योजना बनाना।

(ख) आवश्यक संख्या में पाठों को पढ़ाना और उनका निरीक्षण करने की खानापूर्ति।

(ग) स्कूल की आमसभा सहित अन्य गतिविधियों का पारंपरिक ढंग से संपादन।

(घ) आवश्यक संख्या में प्रोजेक्ट, लिखित अभ्यास आदि पूरा करना। "शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान जिस तरह से पाठ की योजना बनाना सिखाया जाता है वह महज़ एक औपचारिकता है जो प्रशिक्षु की ज्ञान और पाठ्यचर्या से संबंधी अवधारणाओं में बाधा पहुँचाए बिना और यहाँ तक कि उन्हें इन अवधारणाओं की और इस पर आधारित अभ्यासों के परिणामों की जानकारी दिए बिना पेशेवर में बदल देता है।"[25]

5. शिक्षक-शिक्षा में हुए नवाचारों के उदाहरण : नयी दृष्टि विकसित करने का आधार

भारत में शिक्षक-शिक्षा में किए गए नवाचारी प्रयासों को मोटे तौर पर दो अवधियों में बाँट सकते हैं– स्वतंत्रता पूर्व की अवधि और स्वतंत्रता के बाद की अवधि। स्वतंत्रता पूर्व के प्रयासों ने किसी एक स्तर की शिक्षा को समग्र के रूप में देखा। वे सभी सफलतापूर्वक चलाए गए और हमारे लिए एक समृद्ध विरासत के रूप में मौजूद हैं, जिनसे बहुत कुछ सीखा जा सकता है।

5.1 स्वतंत्रता-पूर्व काल में नवाचार

- 'दक्षिणमूर्ति संस्थान' के तहत 1920 में गिजूभाई वधेका ने गुजरात के भावनगर में कई नवाचारी पूर्व-प्राथमिक स्कूल खोले। इसका पूर्व-प्राथमिक शिक्षा पर समग्र रूप से व्यापक प्रभाव पड़ा।
- 1921 में पश्चिम बंगाल में रवींद्रनाथ टैगोर ने शांतिनिकेतन की स्थापना की।
- 1937 में महात्मा गांधी ने वर्धा (महाराष्ट्र) में प्राथमिक स्तर की शिक्षा के लिए बेसिक शिक्षा की योजना शुरू की।
- इन तीनों केंद्रों में मात्र शिक्षक-शिक्षा ही नहीं दी जाती थी। इन तीनों के बारे में विस्तार से जानने के लिए कृपया परिशिष्ट-I देखें।

स्वतंत्रता के पश्चात देश में शिक्षक-शिक्षा में चल रहे कुछ मुख्य नवाचारों का अध्ययन ऐसे बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए किया गया जो इन्हें परंपरागत शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों से अलग करते हैं। इन्हें अलग बॉक्सों में प्रस्तुत किया गया है। शिक्षक-शिक्षा का प्रस्तावित नया दृष्टिकोण वह रूपरेखा (ढाँचा) प्रस्तुत करता है जिसमें सेवा-पूर्व तथा चल रहे शिक्षक विकास कार्यक्रमों को नया रूप दिया जा सके ताकि ऐसे चिंतनशील शिक्षक तैयार हो सकें जो लाखों बच्चों की स्कूली शिक्षा में मूलभूत परिवर्तन लाने को प्रतिबद्ध हों।

5.2 स्वतंत्रता के बाद के नवाचार

इन प्रयासों की संख्या 7 है जिन्हें काल क्रमानुसार दिया गया है।

- माध्यमिक शिक्षक-शिक्षा का चार वर्षीय समाकलित शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम, क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयों, एन.सी.ई.आर.टी. (1960–देखें बॉक्स-1)
- माध्यमिक शिक्षक-शिक्षा का एक वर्षीय कार्यक्रम,

25. *कृष्ण कुमार (2002) प्लांड लेसंस एंड अदर प्रॉब्लम्स ऑफ़ टीचर ट्रेनिंग इन रिफ्लेक्शन्स ऑफ़ लेसन प्लानिंग, आई. ए. एस. ई, डिपार्टमेंट ऑफ़ एजुकेशन, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ. 10*

वेदछी, गुजरात (1968 से आगे तक) (देखें बॉक्स-2)

- होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम, एकलव्य, मध्य प्रदेश (1972-2002) (देखें बॉक्स 3)
- प्रारंभिक शिक्षक–शिक्षा : एक एकीकृत उपागम; मीरांबिना, श्री अरविंद शिक्षण सोसायटी, नई दिल्ली (1983)
- प्राथमिक शिक्षक-शिक्षा का चार वर्षीय कार्यक्रम (बी.एल. एड.), शिक्षा-संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय (1994 से) (देखें बॉक्स-5)
- "अन्वेषण अनुभव"–एक सहभागी शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम, शिक्षा विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान। (देखें बॉक्स-6)। इन प्रयासों का विस्तारपूर्वक वर्णन बॉक्सों में क्रमानुसार दिया गया है।
- विस्तृत शिक्षक–शिक्षा कार्यक्रम : गांधी शिक्षण भवन, शिक्षा महाविद्यालय, मुंबई (2000) (देखें बॉक्स 7)

बॉक्स 1

क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयों, एन.सी.ई.आर.टी. (1960) का माध्यमिक शिक्षक-शिक्षा का चार वर्षीय एकीकृत कार्यक्रम

यह कार्यक्रम एन.सी.ई.आर.टी. के चार क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयों में 1960 में शुरू किया गया था। ये महाविद्यालय अजमेर, भुवनेश्वर, मैसूर और भोपाल में हैं। विज्ञान व मानविकी विषयों के माध्यमिक शिक्षकों के लिए यह कार्यक्रम तैयार किया गया था।

पैंतीस साल की अवधि में कार्यक्रम की अध्ययन-योजनाओं में लगातार बदलाव किया जाता रहा है, जो उसका सबसे बड़ा सार्थक नवाचार है। शुरुआत में पाठ्यचर्या स्नातक स्तर की विषय-केंद्रित दक्षता हासिल करने और पढ़ाने के तरीके में पेशेवर क्षमता प्राप्त करने पर केंद्रित थी। आरंभ में चार वर्ष के उपरांत पाठ्यक्रम की समाप्ति पर शिक्षार्थी को बी.एससी. बी.एड. की कंपोजिट डिग्री दी जाती थी। बाद में इसमें परिवर्तन लाया गया, जिसमें तीन वर्ष के उपरांत बी.एससी. की डिग्री दी जाने लगी ताकि विद्यार्थी स्नातकोत्तर के लिए विज्ञान के किसी विषय को चुन सके। इस प्रकार के प्रावधान के लागू होने के बाद तीन साल की डिग्री प्राप्त करने के उपरांत विद्यार्थी अगले साल के लिए नहीं रुकते थे। अधिकांश बी. एससी. की डिग्री लेकर छोड़ने लगे। ऐसे में पुनः वही कंपोज़िट डिग्री वाला कार्यक्रम ही लागू कर दिया गया। 1996 में, एन.सी.ई.आर.टी. की समीक्षा के दौरान दिए गए प्रस्तावों के मद्दे नज़र बी.ए. बी.एड. (कला) कार्यक्रम को बंद कर दिया गया। बी.एससी., बी.एड. का एकीकृत कार्यक्रम आज भी चल रहा है।

इसमें प्रवेश के लिए न्यूनतम योग्यता उच्च माध्यमिक अर्थात् 12वीं उत्तीर्ण है। इस एकीकृत कार्यक्रम में विषय केंद्रित ज्ञान (60 प्रतिशत) व्यावसायिक शिक्षा (20 प्रतिशत) और सामान्य शिक्षा (20 प्रतिशत) है, जो बी.एससी. बी.एड. की डिग्री की ओर ले जाती है।

इन चारवर्षीय एकीकृत कार्यक्रमों की सार्थकता देखने के लिए अनेक अध्ययन किए गए। मुख्य निष्कर्ष यह है कि इन कार्यक्रमों द्वारा तैयार अध्यापक परंपरागत एकवर्षीय बी. एड. कार्यक्रम द्वारा तैयार अध्यापकों से बहुत बेहतर होते हैं। इन कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में अंतर के कई कारण हो सकते हैं जैसे मेधावी विद्यार्थियों का चुनाव, अधिक अवधि, एकीकृत पाठ्यचर्या के साथ-साथ विषय-वस्तु को पढ़ना और शिक्षण की विधियों को सीखना, आदि। ठोस संकल्पित आधार, विकसित देशों में इनकी सार्थकता तथा अनुभवों के ठोस प्रमाण तथा अनेक विशेषज्ञ समितियों की सिफ़ारिशों के बावजूद ये नवाचार मुख्यधारा से जुड़ने के बजाय सिर्फ़ एन.सी.ई.आर.टी. के चार शिक्षा संस्थानों तक ही सीमित रह गए।

बॉक्स 2
माध्यमिक शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम, गांधी विद्यापीठ
वेदछी, गुजरात (1968)

1968 में गुजरात के सूरत जिले के गांधी विद्यापीठ, वेदछी में शिक्षक-शिक्षा के वेदछी कार्यक्रम की शुरुआत हुई। इस कार्यक्रम की अवधि एक वर्ष है और हर साल इसमें 40-50 विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाता है। गांधी दर्शन पर आधारित होने के कारण विद्यापीठ परिसर में विद्यार्थियों की जीवन-शैली स्वयं-सहायता व आत्मनिर्भरता के सिद्धांतों पर आधारित है। विद्यार्थी भोजन पकाने, शौचालय साफ़ करने, कपड़े धोने और सारे परिसर की देखभाल व मरम्मत करने में शामिल होते हैं। यह उनके आत्मनिर्भर होने के लिए सीखी जाने वाली गतिविधियों का हिस्सा है।

विषयों को स्वतंत्र अनुशासनों की तरह नहीं पढ़ाया जाता है बल्कि इन्हें विशेष रूप से बनाई गई गतिविधियों या 5 से 15 दिन की अवधि के परियोजना कार्यों में बुना जाता है। इन परियोजनाओं को आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों में रखा जाता है ताकि समुदाय के साथ प्रत्यक्ष संबंध बनाया जा सके। विद्यार्थी-अध्यापक विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में रहने वाले अनेक ग्रामीण समुदायों की बुनियादी आवश्यकताओं के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। इनमें पीने के पानी की समस्या, अध्यापकों की अनुपस्थिति, स्वास्थ्य की समस्या, भूमिहीन श्रमिकों की समस्या से लेकर विकास परियोजना से उत्पन्न होने वाली समस्याएँ शामिल हैं।

विद्यार्थियों और अध्यापकों के साथ परस्पर व्यवहार और बातचीत से समुदाय लाभ प्राप्त करते हैं और समस्याओं को निपटाने में सहयोगी रणनीतियों को बनाने में सहयोग देते हैं। समुदाय गाँव की सफ़ाई, व्यक्तिगत और सामुदायिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के नए तौर-तरीकों के साथ शामिल होते हैं। विद्यालयों और अध्यापकों से जुड़ी विशेष समस्याओं की भी पहचान की जाती है और समुदाय के लोग संभावित समाधान ढूँढ़ने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। प्रायः प्रासंगिक मुद्दों पर बातचीत की जाती है। इन मुद्दों में रवींद्रनाथ टैगोर के विचारों से लेकर प्राकृतिक या मानवीय आपदा पर बातचीत शामिल है।

इस कार्यक्रम की मुख्य विशेषताएँ हैं: गतिविधियों में सहभागिता द्वारा सीखना, समूह कार्य और सामूहिक परिचर्चा द्वारा आत्मनिर्देशित शिक्षण, विद्यार्थी-शिक्षकों द्वारा किसी समस्या का स्वतंत्र विश्लेषण तथा अनुभव पर आधारित स्वत:प्रेरित सीखने की क्रिया।

गांधी विद्यापीठ, वेदछी में बेदछी शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम पूरी तरह सहभागिता उन्मुख प्रक्रिया पर केंद्रित है।

बॉक्स 3

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम (एच.एस.टी.पी.) :
शिक्षक-प्रशिक्षण, एकलव्य, मध्य प्रदेश (1982)

अध्यापकों का प्रशिक्षण हमेशा से होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम (एच.एस.टी.पी.),का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाग रहा है। प्रत्येक अध्यापक को तीन वर्षों के लिए हर गर्मियों में तीन सप्ताह के लिए आवासीय प्रशिक्षण लेना ज़रूरी था। इन वार्षिक सत्रों में प्रत्येक स्कूल में मासिक बैठक और पूर्व-निर्धारित कार्यक्रम शामिल थे। इसके पीछे बुनियादी दर्शन यह था कि हर शिक्षक प्रत्येक वह प्रयोग करे जो बच्चों के लिए करना आवश्यक है ताकि हर शिक्षक को प्रत्येक प्रयोग की समस्याओं और कुशलता से जुड़ा प्राथमिक अनुभव प्राप्त हो सके, प्रयोग के परिणामों पर अपने सहकर्मियों से बातचीत कर सके ताकि वह अपने विद्यार्थियों को भी इस तरह की बातचीत के लिए मार्गदर्शन दे सके। साथ ही उन्हें यह अवसर भी मिलता था कि 'क्या किया जा सकता है?' की संभाव्यता पर फ़ीडबैक दे सके जिसके आधार पर अगर आवश्यक हो तो पाठ्यचर्या को संशोधित किया जा सके। इसका अर्थ है कि शिक्षक भी कक्षा में अपने 4 विद्यार्थियों के समूह के समान समूह में कार्य करते थे, विद्यार्थियों को उपलब्ध कराया जाने वाला किट शिक्षकों को भी दिया जाता था और उनके विद्यार्थी जिस प्रक्रिया से गुज़रते थे, उसी प्रक्रिया से उन्हें भी गुज़रना होता था। कार्यक्रम के प्रारंभिक वर्षों में इन गतिविधियों का मतलब था कि पाठ्यचर्या निर्माण केवल विषय के विशेषज्ञों का ही क्षेत्र नहीं है बल्कि प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा और बाद में विद्यार्थियों के साथ हुए अनुभव द्वारा अध्यापक भी पाठ्यचर्या को अंतिम रूप देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। प्रयास और फ़ीडबैक पर आधारित यह पूरी प्रक्रिया काफ़ी महत्त्वपूर्ण थी क्योंकि इसमें शिक्षक सारे कार्यक्रम का संचालन करते थे और वे इसे अपना समझते थे जो कि इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी विशेषता थी।

इन सभी गतिविधियों के साथ जो प्रशिक्षण कार्यक्रम का महत्त्वपूर्ण हिस्सा थीं, "लघु प्रश्नों" का प्रात:कालीन सत्र हुआ करता था जिसमें भाग लेने वालों को उनके आसपास के परिवेश के अवलोकन तथा साधारण वैज्ञानिक अनुसंधान जो वे वहीं तुरंत कर सकते थे, से संबंधी प्रश्नों का उत्तर देने के लिए कहा जाता था। प्रशिक्षण सत्रों के दौरान भी शिक्षक परेशान करने वाले किसी तरह के भी प्रश्नों को पूछने के लिए स्वतंत्र थे। यह अकसर बहुत से विषयों पर चर्चा की ओर ले जाता था जैसे सजीव या निर्जीव क्या है, क्या तत्काल ही जीवन उत्पन्न हो सकता है, और वैज्ञानिक अवलोकनों में शुद्धता तथा छिपी त्रुटियाँ। सामान्य वैज्ञानिक मुद्दों पर सायंकालीन भाषण भी होते थे। ये पाठ्यचर्या से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित नहीं था लेकिन ये सामग्री में इतने समृद्ध थे कि वैज्ञानिक मुद्दों में रुचि पैदा करते थे।

हालाँकि सरकारी स्कूलों में विज्ञान की पढ़ाई को सुधारने के अपने लक्ष्य को एच.एस.टी.पी. ने पूरा किया है या नहीं इस बारे में बहस हो सकती है मगर एक बात सभी के सामने साफ़ थी कि ऐसा कोई भी कार्यक्रम स्कूलों में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि अध्यापकों को एच.एस.टी.पी. का दर्शन न समझाया जाए और कक्षा में उसे लागू न किया जाए। शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम इस कड़ी में महत्त्वपूर्ण निर्धारक थे।

एच.एस.टी.पी. कार्यक्रम एक गैर-सरकारी संस्था और राज्य सरकार के बीच राज्य की स्कूल व्यवस्था के भीतर नए व्यवहारों को स्थापित करने में सहयोग का एक बेहतरीन उदाहरण है।

होशंगाबाद प्रयोग सरकार और एन.जी.ओ. के बीच सहयोग का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। साथ ही यह विज्ञान की पढ़ाई और शिक्षक प्रशिक्षण में उच्च सफलता का भी उदाहरण है। मध्य प्रदेश सरकार ने ऐसा कार्यक्रम शुरू करके एक सही दिशा दी है।

बॉक्स 4

प्रारंभिक शिक्षक-शिक्षा : एक एकीकृत उपागम; मीरांबिका, श्री अरविंद शिक्षण सोसायटी नयी दिल्ली (1983)

समग्र शिक्षा 'संपूर्ण मनुष्य के लिए शिक्षा' है। इसमें सीखना अनुभव द्वारा होता है। यह सीखना विस्तृत, ऊँची और गहरी प्रक्रिया है जो कि प्रत्येक विद्यार्थी की क्षमता के विकास का आधार है।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य है भौतिक, भावात्मक तथा संज्ञानात्मक प्रभाव क्षेत्रों के गुणों और क्षमताओं का अधिकतम विकास और व्यक्ति के अंत:करण और आत्मा की गहरी और सूक्ष्मतर परत की स्व-खोज। ऐसा यह स्वयं की जानकारी बढ़ाने की प्रक्रिया के द्वारा करता है। शिक्षा निर्माण की प्रक्रिया के रूप में देखी जाती है, तब भी यह सीखने वाले की विलक्षणता का आदर है जो उसे इस बात की इज़ाज़त देता है कि वह बाहरी और अंतरतम व्यक्ति के विकास में स्वयं का प्रगतिशील संतुलन बनाए।

विद्यार्थी-शिक्षक प्रक्रियाएँ *जिनमें शामिल हैं–स्व-निर्देशित अधिगम और स्व-अवलोकन जो सीखने वाले को पाठ्यसामग्री; स्व-चिंतन तथा स्व-मूल्यांकन के संबंध में चेतनापूर्ण चुनाव की ओर ले जाते हैं।*

शिक्षक-प्रशिक्षक प्रक्रियाएँ जो सुनिश्चित करती हैं स्वत: प्रेरित सीखना। प्रत्येक विद्यार्थी-अध्यापक को व्यक्तिगत खूबियाँ व कमियाँ जानने को प्रोत्साहित किया जाता है। एक अध्यापक को अपनी पेशेवर कार्यप्रणाली से जुड़ी प्रवृत्ति में बदलाव से गुज़रना होता है। इसके लिए ज़रूरी होता है शिक्षक का कार्य करने वाले व्यक्ति से एक सहायक की ओर बदलाव, अनुदेशक न होकर आह्वाहक हो जाना।

स्व-निर्देशित अधिगम की कुछ रणनीतियाँ हैं– *गहन मननशील प्रश्नों के उत्तर खोजना, उन्हें दैनिक जीवन में उतारने के उपाय खोजना, विचारशील अध्ययन, कक्षा अवलोकन के बारे में मनन के बाद समूह परिचर्चा। इसके बाद व्यक्तिगत मनन तथा स्वअध्ययन के लिए मुद्दों की पहचान की जा सकती है तथा अनुप्रयोग और जुड़ाव को दर्शाने वाला प्रस्तुतीकरण, स्व-अवलोकन के लिए डायरी रखना, खूबियों व कमज़ोरियों को पहचानना तथा पूर्णता की ओर उन्मुख करने के लिए कार्य करना आदि भी शामिल किए जा सकते हैं।*

मूल्यांकन– *समग्र शिक्षा का मूल्यांकन निर्णय नहीं देता बल्कि सकारात्मक फ़ीडबैक देता है। यह एक नैदानिक प्रक्रिया है जो विद्यार्थियों को यह समझने में सहायता करती है कि किस पक्ष को मजबूत करना है और सीखने की प्रक्रिया में अगला लक्ष्य क्या हो।*

अनुभव यह बताता है कि जब विद्यार्थियों को वास्तव में सम्मान दिया जाता है तो वे अपनी क्षमताओं और सीमाओं के बारे में आश्चर्यजनक रूप से ईमानदार हो जाते हैं। साथ ही आत्मबोध को प्रेरित करने में एक बेहतरीन उपाय स्व-मूल्यांकन है। आत्मबोध एक अच्छा प्रशिक्षक बनने के लिए अनिवार्य है। विद्यार्थी-शिक्षक, आत्मविकास की जिम्मेदारी लेना सीखते हैं ताकि अपनी शक्तियों को बढ़ाने के लिए रास्ते ढूँढ़ सकें और जवाब खोज सकें, संभावित क्षमताओं को और ज़्यादा तीक्ष्ण कर सकें तथा उन पर अधिकार कर लें। जब एक विद्यार्थी स्वयं इस प्रक्रिया को रोज अनुभव करेगा तो कक्षा में बच्चों के भीतर इस प्रक्रिया को स्वाभाविक तौर पर उत्पन्न कर पाएगा और एक सच्चे वास्तविक बाल-केंद्रित अधिगम वातावरण बनाने में सफल होगा। अगर शिक्षा प्रक्रिया का निर्धारक सिद्धांत सच्चे तरीके से सीखना बन जाएगा तो एक निर्णायक परिवर्तन होगा जिसमें विद्यार्थी, शिक्षक और राष्ट्र फल-फूल सकेंगे।

ये नवाचार, मीरांबिका, अरविंद एजुकेशनल सोसायटी, जो कि एक प्रसिद्ध गैर सरकारी संस्थान है, में किया गया है और यह मुख्य रूप से भागरीदारी प्रक्रियाओं पर ज़ोर देता है लेकिन कुछ संभाषणों और नुस्खे देने वाले अभ्यासों के साथ।

बॉक्स 5

प्रारंभिक शिक्षक-शिक्षा का चार-वर्षीय एकीकृत कार्यक्रम : बी.एल.एड, मौलाना आज़ाद प्रारंभिक और सामाजिक शिक्षा केंद्र (एम.ए.सी.ई.एस.ई.), शिक्षा संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, (1994)

प्रारंभिक शिक्षा में स्नातक (बी.एल.एड.) एक चार वर्षीय एकीकृत व्यावसायिक डिग्री है। प्रारंभिक शिक्षक-शिक्षा का यह कार्यक्रम उच्चतर माध्यमिक (कक्षा बारह अथवा उसके समतुल्य) स्तर के बाद शुरू होता है। वर्तमान में यह कार्यक्रम दिल्ली विश्वविद्यालय के छह कॉलेजों में चल रहा है। लगभग 700 विद्यार्थी इस कार्यक्रम से स्नातक की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं जो वर्तमान में सरकारी व निजी स्कूलों में कार्यरत हैं। इनमें से कुछ कला, मानविकी और समाज विज्ञान में स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त कर शिक्षक-प्रशिक्षक बन चुके हैं।

बी.एल.एड. के इस कार्यक्रम का अभिकल्पन विषय ज्ञान, मानव विकास, शिक्षा शास्त्रीय ज्ञान और स्व-ज्ञान के अध्ययन को एक साथ प्रस्तुत करने के लिए किया गया है। बी.एल.एड. का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक रूप से संवेदनशील चिंतक कार्यकर्ता तैयार करना है। यह बुझे हुए व दब्बू अध्यापक को एक ऐसे अध्यापक में बदलने का प्रयास है जो प्राप्त पाठ्यचर्या और नुस्खे की तरह दिए गए ज्ञान पर आलोचनात्मक रूप से विचार कर सके। यह विद्यार्थियों को पुस्तकीय ज्ञान से दूर ले जाकर कुछ और करने के लिए तैयार करता है। बी. एल. एड. के विद्यार्थी स्वयं अपनी खोज शुरू करते हैं, सभी तरह की जटिलताओं में विचारों की जाँच करते हैं और परेशानियों से निपटते हैं। इसका उद्देश्य विद्यार्थी में ऐसा मानसिक लचीलापन विकसित करना है जो कि आवश्यक है विविध साधनों से मिले ज्ञान का संश्लेषण और आलोचनात्मक विश्लेषण के लिए तथा कक्षा शिक्षण की जटिल चुनौतियों का सामना करने के लिए। विद्यार्थी विषय-सामग्री के मुद्दे के साथ जुड़ना, मूल्यांकन के समुचित तरीके पर चिंतन करना और सीखने वाले की आवश्यकता के अनुसार शिक्षाशास्त्र को संगतपूर्ण बनाने का प्रयास करता है।

बी.एल.एड. पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की वैयक्तिकता के विकास हेतु प्रयत्न करता है। यह इस मान्यता पर आधारित है कि वैयक्तिक रूपांतरण ही सामाजिक रूपांतरण का मार्ग प्रशस्त करता है। पाठ्यक्रम की संरचना विद्यार्थी को स्वयं तथा दूसरों को समझने से जुड़े मुद्दों के साथ गहरे रूप से जुड़ने का अवसर देती है। इस पाठ्यक्रम में बच्चे की प्रकृति, वयस्क-बाल संबंध और कक्षा के भीतर इसकी गत्यात्मक प्रक्रिया को समझने पर विशेष बल दिया जाता है। विद्यार्थी जैसे ही बच्चों को सीखने के बेहतरीन उपायों को उपलब्ध कराने पर चिंतन व्यक्त करते हैं वैसे ही वे चर्चा करते हुए शिक्षा की राजनीति के मुद्दे से जुड़ जाते हैं। इस पाठ्यक्रम का अभिकल्पन ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक मुद्दों के अध्ययन द्वारा समकालीन भारतीय वास्तविकताओं की समझ को विकसित करने के लिए किया गया है। विद्यार्थी स्कूली शिक्षा के दौरान सीखने की प्रक्रिया में जेंडर असमानता को देखते व विश्लेषित करते हैं, साथ ही इसे बदलने वाली रणनीतियाँ तैयार करते हैं। बी.एल.एड. पाठ्यचर्या चक्रीय पाठ्यचर्या है जिसमें

समान मुद्दों पर चार वर्षों में जटिलताओं के विभिन्न स्तरों व विभिन्न संदर्भों में बातचीत होती है।

कार्यक्रम की लंबी अवधि विद्यार्थियों को शैक्षणिक मुद्दों पर अपने खुद के दृष्टिकोण को खोजने व बताने के लिए मनोवैज्ञानिक अवसर उपलब्ध कराती है। वे चार साल तक लगातार स्कूली व्यवस्था से जुड़े रहते हैं। चौथे साल में 17 सप्ताहों का एक स्कूल इंटर्नशिप कार्यक्रम होता है जिसमें विद्यार्थी अपने विचारों को व्यवहार में लाते हैं और इस प्रक्रिया पर अपने सुझाव देते हैं। विद्यार्थी अपने अनुभवों में वृद्धि करने के लिए प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे नवाचारी प्रयोगों को प्रस्तुत करने वाले संस्थानों की यात्रा भी करते हैं। विद्यार्थी शोध अध्ययन इस उद्देश्य से लेते हैं कि वे कक्षा केंद्रित शोध के द्वारा अनुक्रियाशील जाँच-पड़ताल की प्रक्रिया को आगे विकसित करेंगे। विशेष रूप से अभिकल्पित 'बोलचाल' कार्यक्रम में आम विद्यार्थी पढ़ाई के दौरान अनेक पेशेवर कौशलों जैसे नाटक, कला, हस्तशिल्प, कहानी सुनाना, संगीत आदि सीखते हैं और विद्यालयों में संसाधन केंद्र को खोलना सीखते हैं।

दिल्ली विश्वविद्यालय का बी.एल.एड. कार्यक्रम पिछले 10 वर्षों से सहभागी प्रक्रिया पर कुछ व्याख्यानों और कुछ आदेशित व्यवहारों के साथ बल देता है। यह चार वर्षीय एकीकृत कार्यक्रम है।

बॉक्स 6

'अन्वेषण अनुभव' : सहभागी शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम : बी.एड. (संवर्द्धित), शिक्षा विभाग वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान (1997)

शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम (टीचर एजुकेशन प्रोग्राम–टी.ई.पी.) अन्य 'अकादमिक कार्यक्रमों' से भिन्न है। एक पेशेवर प्रशिक्षण कार्यक्रम होने के नाते जो सरोकार, अपेक्षाएँ और दबाव इसके ऊपर हैं वह अन्य अकादमिक कार्यक्रमों की तुलना में बहुत गहरे हैं। फिर भी व्यवहार में कोई भी टी.ई.पी. किसी भी अकादमिक कार्यक्रम के समान होता है क्योंकि इसकी संरचित पाठ्यचर्या कुछ मान्यताओं के समूह पर आधारित है तथा अनेक निर्देशित अनुभवों से भरी होती है जिसे बेहतर ढंग से चुना जाता है और वह न्यायसंगत भी होती है। ऐसी संरचना के भीतर विद्यार्थी अध्यापकों द्वारा दिए गए ज्ञान का केवल प्राप्तकर्ता बनकर रह जाता है। वास्तविक गुणवत्ता तो 'प्रदाता' के साथ ही साथ 'प्राप्तकर्ता' की गुणवत्ता पर निर्भर होती है। अनुभव बताते हैं कि स्कूल व्यवस्था में इस तरह के टी.ई.पी. का बहुत कम प्रभाव पड़ता है। इसीलिए 1997-98 में वनस्थली विद्यापीठ के शिक्षा संकाय में अलग तरीके से अभिकल्पित किए टी. ई.पी. बनाने का प्रयास किया गया था। जिसका मुख्य उद्देश्य उपलब्ध संसाधनों एवं समय सीमा के भीतर ऐसे लचीले कार्यक्रम को उत्पन्न करने की संभावना को खोजना तथा पता लगाना था कि किस सीमा पर जाकर अनुभव 'सहभागी' बन जाता है।

मान्यताएँ

अन्वेषण अनुभव इस बात में विश्वास रखते हैं कि टी.ई.पी. में सभी विद्यार्थी-शिक्षक के लिए अपने तरीके से सीखने व भागीदारी करने के अवसर उपलब्ध कराने के लिए संभावनाएँ मौजूद हैं। वे केवल

'प्राप्तकर्ता' न बनें अपितु सहभागी बनें, पाठ्यचर्या बनाएँ और इसका आपस में आदान-प्रदान करें। सीखने वाले की आवश्यकता के अनुसार सीखने के अनुभव की संख्या व रूप बढ़ेगा। ऐसा कार्यक्रम प्रत्येक विद्यार्थी अध्यापक के लिए व्यक्तिगत तौर पर अर्थपूर्ण व समृद्धशाली होगा। हर व्यक्ति इसे प्रभावी तरीके से प्रयोग करने में समर्थ हो पाएगा। सांगठनिक स्तर पर इस तरह का सम्पूर्णतावादी और अनुभवजनित रुख टी.ई.पी. कार्यक्रमों में ज़्यादा दम लाएगा, आत्मसातीकरण को बढ़ावा देगा और समय सीमा को बिना बढ़ाए उपलब्ध संसाधनों के भरपूर उपयोग का अवसर देगा।

विद्यार्थियों द्वारा दिए गए नाम '**अन्वेषण**' कार्यक्रम को एन.सी.टी.ई. ने बी.एड. (संवर्द्धित) के नाम से स्वीकृत किया। इसकी मुख्य बातें निम्न हैं:

- ***पहल***–स्वतंत्र रूप से आगे कैसे बढ़ा जाए इसका निर्णय लेना; खेल तैयार करना, जड़ हुई सोच को तोड़ना; संवेदनशील होना–इसमें वे सभी बातें शामिल हैं जो व्यक्ति को अपनी खूबियाँ और कमियाँ पहचानने में मदद करतीं हैं, दूसरों के लिए स्वीकृति, शिक्षक की भूमिकाओं का महत्त्व एवं उनकी माँग और कार्यक्षेत्र की परिस्थितियाँ। इस तरह के सत्र शुरुआती चरण में अकसर होते हैं।
- दूसरे सभी अधिगम अनुभवों में **पर्याप्त सामग्री** शामिल है। इसमें अवधारणात्मक तथा व्यावहारिक दोनों तरह की बातें होती हैं और विद्यार्थी-शिक्षक को उन बातों को पहचानना है जो उसके प्रभावी शिक्षक बनने के लिए सार्थक हैं। आदान-प्रदान का तरीका भी वही होता है जो सार्थक समझा जाए–सामूहिक और कभी-कभी वैयक्तिक तौर पर। शिक्षक-प्रशिक्षक वहाँ सहयोग के लिए, विषय में आवश्यकतानुसार जोड़ने के लिए, सामूहिक प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए तथा समूह की क्रिया को आगे बढ़ाने के लिए मौजूद रहते हैं।
- *मूल्यांकन और फ़ीडबैक*–इसमें शामिल हैं मूल्यांकन के विभिन्न तरीके–स्व-मूल्यांकन, साथी द्वारा मूल्यांकन, शिक्षकों द्वारा फ़ीडबैक और औपचारिक परीक्षण जब इसकी ज़रूरत महसूस हो। विश्वविद्यालयीय परीक्षा साल के अंत में होती है।

प्रस्थान बिन्दु

पाठ्यचर्या निर्माण, सीखने वाले पर केंद्रित, सहभागिता परक उच्च प्रासंगिकता बोध, व्यक्ति और समूह के तौर पर निर्धारित गति और सीखने के तरीके, निरंतर मूल्यांकन एवं फ़ीडबैक, विद्यार्थियों के लिए व्यक्तिगत रूप से संतुष्टिपरक, आत्म-विकास में वृद्धि।

यह अन्वेषण प्रयोग पिछले आठ वर्षों से पूर्णत: सहभागी प्रक्रिया उन्मुख शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम पर केन्द्रित है।

बॉक्स 7

विस्तृत शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम : गांधी शिक्षण भवन, शिक्षा महाविद्यालय मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई (2000)

गांधी शिक्षण भवन, मुंबई विश्वविद्यालय से संबंधित माध्यमिक स्कूल शिक्षकों के लिए सन् 2000 से एकीकृत बी. एड. कार्यक्रम चला रहा है। यह झुग्गी-झोंपड़ी वासियों का वास्तविक अनुभव कराता है। इसका लक्ष्य यह है कि 'विद्यार्थी-शिक्षक' को गरीब और पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परंपराओं का पता चल सके और बच्चों के विकास पर उसके पड़ने वाले प्रभावों का अंदाज़ा लग सके। शिक्षकों को इस प्रकार शिक्षित किया जाता है कि उनकी धारणाओं का विकास हो और उनमें व्यावसायिक कौशल उत्पन्न हों जिसकी सहायता से वे बच्चों को इस प्रकार विरोधी परिस्थिति से उबरने की शिक्षा दे सकें। इस प्रकार का दृष्टिकोण मुंबई विश्वविद्यालय के सभी शिक्षा महाविद्यालयों का हिस्सा बन चुका है।

इसी प्रकार जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग ने भी शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम में सामाजिक संदर्भों को जोड़े जाने का प्रस्ताव रखा है।

इस प्रकार के प्रयोगों से यह निश्चित होता है कि युगांतकारी बदलाव संभव है और मुंबई का गांधी शिक्षण भवन और शिक्षा विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया का प्रस्तावित कार्यक्रम शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम में बदलाव की तत्परता को दिखाता है। लेकिन केवल पूर्ण सहभागिता आधारित पाठ्यक्रम ही अपनाए जाने चाहिए जो आज की आवश्यकता है। वे ही भारतीय शिक्षा का परिदृश्य बदल सकते हैं।

6. शिक्षक-शिक्षा : नयी दृष्टि

शिक्षक-शिक्षा में आमूल-चूल बदलाव इसलिए आवश्यक हो गया है कि इसके प्रभावों और संभावनाओं का विस्तार हो सके। इस आधार पत्र के पिछले अनुभागों में इस बात पर विशेष ध्यान दिया गया कि शिक्षक-शिक्षा के उपागम में मूलभूत बदलाव किए जाने की जरूरत है। इस नए उपागम के मुख्य लक्षणों का खाका यहाँ प्रस्तुत है, जिसकी फोकस समूह में चर्चा हुई है:

शिक्षक-शिक्षा का 'नयी दृष्टि' शीर्षक इसलिए ही नहीं रखा गया है कि इसके सारे आयाम पूरी तरह नए हैं। बल्कि इसलिए यह शीर्षक रखा गया है क्योंकि यह शिक्षक-शिक्षा के बारे में हमारी दृष्टि में एक निश्चित बदलाव लाने की बात करता है। यह सही है कि पहले भी इस तरह के प्रयास हो चुके हैं। इनमें से कई बार शिक्षक-शिक्षा की समीक्षा करने, इसे पुनर्जीवित और पुनर्गठित करने की कोशिश की गई है। लेकिन ये प्रयास वास्तविक व्यवहार में नहीं लाए जा सके और कार्यक्षेत्र में ये प्रासंगिक हैं या नहीं, ऐसा प्रमाण नहीं दे सके।

इस समूह की यह राय है कि शिक्षक-शिक्षा को जीवंत और इस क्षेत्र में उठ रही माँगों के अनुरूप बनाने के लिए (न सिर्फ़ परिचालन या कार्यान्वयन के रूप में बल्कि सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है) शिक्षक-शिक्षा को रेखांकित करने वाली बुनियादी अवधारणाओं एवं मान्यताओं में भी निश्चित तथा परिलक्षित बदलाव ज़रूरी हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित सुझावों के आलोक में शिक्षक-शिक्षा के उपागम में भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाना चाहिए। यह शिक्षक-शिक्षा में बदलाव का सुझाव है।

6.1 दृष्टि

शिक्षक-शिक्षा को स्कूली व्यवस्था की आवश्यकताओं के प्रति ज़्यादा संवेदनशील होना पड़ेगा। इसके लिए शिक्षकों को निम्नलिखित दोहरी भूमिका के लिए तैयार करना होगा।

- वे सीखने-सिखाने की परिस्थितियों में उत्साहवर्धक, सहयोगी तथा सीखने को सहज बनाने वाले बनें जो अपने विद्यार्थियों को उनकी प्रतिभाओं की खोज में, उनकी शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमताओं को पूर्णता तक जानने में, उनमें अपेक्षित सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों के तथा चरित्र के विकास में तथा जिम्मेदार नागरिकों की भूमिका निभाने में समर्थ बनाएँ।
- जो एक समूह के सक्रिय सदस्य के रूप में विद्यार्थियों के बदलते हुए सामाजिक तथा व्यक्तिगत ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए स्कूली पाठ्यचर्या के नवीकरण की प्रक्रिया में योगदान देने के चेतन प्रयास करें। ऐसा करने में वे विगत के अनुभवों के साथ राष्ट्रीय विकास के लक्ष्यों और शैक्षणिक प्राथमिकताओं के प्रकाश में उभरती हुई ज़रूरतों और सरोकारों का ध्यान रखें।

इन अपेक्षाओं से पता चलता है कि अध्यापक बड़े संदर्भ और गतिकी में काम करता है और उससे बड़ी उम्मीदें जुड़ी होती हैं। कहा जा सकता है कि शिक्षक को शिक्षा के सामाजिक संदर्भों के प्रति जवाबदेह और संवेदनशील होना चाहिए। साथ ही उसे विद्यार्थियों की पृष्ठभूमि के अंतर, राष्ट्रीय तथा वैश्विक संदर्भों, सामाजिक समता, न्याय आदि के राष्ट्रीय लक्ष्यों की जानकारी भी होनी चाहिए।

इन आकांक्षाओं पर खरा उतरने के लिए शिक्षक-शिक्षा को इस प्रकार का होना चाहिए जो प्रत्येक प्रशिक्षु को समर्थ बना सके ताकि वह–

- बच्चों का खयाल रख सके और उनके साथ रहना पसंद करे।
- सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक संदर्भों में बच्चों को समझ सके।
- व्यक्तिगत अनुभवों से अर्थ निकालने को अधिगम अर्थात सीखना समझे।
- सीखने के तरीके समझे, सीखने की अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करने के संभावित तरीके जाने तथा सीखने के प्रकार, गति तथा तरीकों के आधार पर विद्यार्थियों की विभिन्नताओं को समझे।
- ज्ञान को चिंतनशील सीखने की सतत उभरती प्रक्रिया माने।
- ज्ञान को पाठ्यपुस्तकों के बाह्य ज्ञान के रूप में न

देखकर साझा संदर्भों और व्यक्तिगत संदर्भों में उसके निर्माण को देखे।

- उन सामाजिक, पेशेवर और प्रशासनिक संदर्भों के प्रति संवेदनशील हो जिनमें उसे काम करना है।
- ग्रहणशील हो और लगातार सीखता रहे, समाज और विश्व को बेहतर बनाने की दिशा में अपनी जिम्मेदारियों को समझ सके।
- वास्तविक परिस्थितियों में न केवल समझदारी वाले रवैये को अपनाने की उपयुक्त योग्यता का विकास करे बल्कि इस तरह की परिस्थितियों का निर्माण करने के भी योग्य बने।
- उसका भाषायी ज्ञान और दक्षता का आधार ठोस हो।
- व्यक्तिगत अपेक्षाओं, आत्मबोध, क्षमताओं, अभिरुचियों आदि की पहचान कर सके।
- अपना पेशेवर उन्मुखीकरण करने के लिए सोच समझ कर प्रयास करता रहे। यह विशेष परिस्थितियाँ अध्यापक के रूप में उसकी भूमिका तय करने में मदद करेंगी।

6.2 नवकल्पित शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में आवश्यक फोकस

यह आवश्यक हो गया है कि शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम इन आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए जवाबदेह हो। यह शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में बुनियादी बदलावों द्वारा ही संभव है। इसका मतलब है कि हमें एकदम नयी दिशा में जाने की आवश्यकता है। जिसके लिए हमें आवश्यक सैद्धांतिक और व्यावहारिक बातें तय करनी चाहिए। इसके पश्चात् प्रचलित ज्ञान और व्यवहार करने को उचित रूप से शामिल करने के लिए, परिवर्तन के लिए या फिर उन्हें छोड़ने के लिए उन्हें जाँचा-परखा जाना चाहिए। उल्लेखनीय है कि शिक्षक-शिक्षा के इस नए उपागम में बहुत सारे पहलुओं पर विशिष्ट अवधारणात्मक और व्यावहारिक फोकस होना चाहिए। उनमें से कुछ प्रमुख पहलू निम्नलिखित हैं :

6.2.1 अधिगम (सीखना)

- विद्यार्थी अधिगम का अनुभव सक्रिय जुड़ाव और सहभागिता के आधार पर प्राप्त करते हैं। इसे करते हुए वे अपने अर्थ और विचार गढ़ते हैं या इन्हें संक्षेप में कहें तो इस प्रकार वे अपने ज्ञान का अपने तरीके से निर्माण करते हैं। इसलिए अधिगम स्त्रोतों की तलाश, विचारों का सम्मिलन, चिंतन, विश्लेषण और आत्मसातीकरण की प्रक्रिया होती है। इस पर विद्यार्थी के सामाजिक संदर्भ का बड़ा प्रभाव होता है।
- अधिगम एक अपसारी (भिन्न दिशाओं में जाने वाली) प्रक्रिया है जो कई माध्यमों से होती है न कि पूर्व-निर्धारित शिक्षक द्वारा केवल एक माध्यम से। यह आवश्यक रूप से सहभागिता-आधारित प्रक्रिया होती है जिसमें विद्यार्थी अपना ज्ञान अपने तरीके से बनाता है जिसे यह ग्रहण, पारस्परिक बातचीत, अवलोकन और चिंतन के माध्यम से निर्मित करता है। इस प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थी के अधिगम में उतार-चढ़ाव होता रहता है। इसलिए यह प्रक्रिया रेखीय न होकर टेढ़ी-मेढ़ी और जटिल होती है।
- अधिगम कोई आसान और सीधी प्रक्रिया नहीं होती। यह जटिल, बहुआयामी और गतिशील प्रक्रिया है।

6.2.2 विद्यार्थी

- चूँकि शिक्षक की भूमिका विद्यार्थी और ज्ञान के संदर्भ में आवश्यक मानी जाती है इसलिए शिक्षक-शिक्षा का मुख्य फ़ोकस विद्यार्थी और सीखने पर होना चाहिए। विद्यार्थी को व्यक्ति विशिष्ट वेक रूप में उसवेक अपने सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों में देखा जाना चाहिए तथा यह मानना चाहिए कि इसमें अद्भुत क्षमता है। इस अर्थ में, विद्यार्थी केवल एक मनोवैज्ञानिक इकाई मात्र नहीं होता, वह जीवंत सहभागी होता है। वह अधिगम प्रक्रिया में भाग लेना चाहता है और उसके सुधार की दिशा में काम भी करना चाहता है। विद्यार्थी अपने सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों के आधार पर चीजों को समझते हैं, अपनी अभिवृत्ति का विकास करते हैं, और अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर अपने तरीके से चीजों की व्याख्या करते हैं।

- सीखने के तरीके और गति के आधार पर विद्यार्थियों में भिन्नता पाई जाती है। एक ही अवस्था में वे अलग-अलग ढंग से सीखते हैं। यह प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक से कहीं अधिक होती है। शिक्षकों को विद्यार्थियों में सीखने की वास्तविक क्षमता की पहचान करने और विद्यार्थियों के 'सीखने के रास्ते' को प्रतिबंधित किए बिना या बिना किसी आदेश आगे ले जाने के सरल तरीके ढूँढ़ने की ज़रूरत है। शिक्षक-शिक्षा को शिक्षकों को इस दिशा में सक्षम बनाने वाला होना चाहिए कि वह विद्यार्थियों की विविधताओं का सम्मान कर सके और यह भी समझ सके कि यह एक गतिशील प्रक्रिया है।
- इस प्रकार विद्यार्थी सक्रिय और सहयोगी बनेंगे और अपने उद्देश्यों, रणनीतियों तथा परिस्थितियों के प्रति सजग होंगे और साथ ही जिम्मेदार भी होंगे। यहाँ सीखने वालों की क्षमता को स्थायी नहीं माना गया है बल्कि यह माना गया है कि अनुभव के साथ उनका विकास होता है।

6.2.3 शिक्षक

- शिक्षक की मुख्य भूमिका सीखने के मार्ग में सहायता करने वाले की होती है। शिक्षक वह होता है जो विद्यार्थियों को उनकी क्षमताओं की पहचान कराए, उनके व्यक्तिगत तथा संदर्भ विशिष्ट अनुभवों को इस तरीके से सामने रखे कि वे राष्ट्र के संदर्भ में स्वीकृत हों।
- शिक्षक को यह समझना चाहिए कि पाठ्यचर्या विद्यार्थी केंद्रित सीखने की प्रक्रिया के संदर्भ में विकसित होती है, वह पहले से तय नहीं हो सकती; शिक्षक विद्यार्थियों द्वारा सीखे जाने की प्रक्रिया में संभव सहयोग देने मात्र के लिए ही तैयार किया जाता है। लेकिन प्रत्येक अधिगम परिस्थिति संचित रूप से शिक्षक को बच्चों की ज़रूरतों को पहचानने के लिए अंतर्दृष्टि प्रदान करती है।
- ऐसी कोई एक पद्धति नहीं है जो सभी विद्यार्थियों को एक ही ढंग से सिखा सके। हर शिक्षक को बोधगम्य अभ्यास द्वारा अलग-अलग विद्यार्थियों में सीखने के तरीके पहचानने होंगे लेकिन इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि *सभी विद्यार्थी अपने-अपने ढंग से सीखते हैं।* शिक्षण विधि की प्रभाविता और उपयुक्तता जाँचने के दो पहलू हैं। पहला है शिक्षक की अपनी शैली जिसमें वह विधि या विधियों का उपयोग करता है। इसका संबंध उसकी अपनी जरूरत से होता है। दूसरा है विद्यार्थियों के सीखने का अपना ढंग। अनोखे ढंग की सहभागिता, सीखने या जानने की प्रक्रिया में शिक्षक तथा विद्यार्थी की भूमिका स्पष्ट रूप से सामने लाती है। जब इसमें दोनों ज्ञान की प्रक्रिया में भाग लेते हैं तो लाभान्वित होते हैं। विद्यार्थी के लिए अधिगम ग्रहण करना शैक्षिक परिस्थितियों का एक बड़ा सरोकार है। इस दृष्टि में तकनीकी रूप से दोनों ही सीखने वाले हैं।
- शिक्षक को अपने आपको ऐसे पेशेवर के रूप में देखने की आवश्यकता है जिसमें उपयुक्त क्षमता, लगन, उत्साह, नए तरीके अपनाने की लगन और चिंतनशीलता है। उसमें संवेदनशीलता भी है, न केवल विद्यार्थियों और संस्था के लिए बल्कि वृहत् सामाजिक संदर्भ में जिसमें व्यक्ति कार्य करता है, की उभरती चिंताओं के प्रति भी।
- शिक्षक को समझ लेना चाहिए कि विद्यार्थी स्कूल में अब उसे ज्ञान के स्रोत के रूप में नहीं देखते। मीडिया ने उनके सामने अनंत संभावनाएँ खोली हैं। फिर भी बहुत सारी ऐसी बातों (जो अव्यवस्थित सूचनाओं के रूप में हैं) को विद्यार्थी को अर्थपूर्ण ढंग तथा सकारात्मक ढंग से सिखाना शिक्षक के हिस्से में ही आता है। अभी आई.सी.टी. जैसी सुविधाओं तक सभी की पहुँच होने में समय लगेगा। शिक्षक को इस तरह की परिस्थिति में (आई.सी.टी. के साथ और इसके बिना) प्रभावी रहने के लिए न केवल दक्षता चाहिए बल्कि ऐसी संवेदनशीलता भी जो युवा विद्यार्थियों को उपयुक्त संदर्भ में परिस्थिति को समझने और स्वीकार करने की ओर ले जाए।
- शिक्षक को क्रिया-आधारित शिक्षण की प्रकृति और

गतिशीलता को समझना चाहिए। यह समझ चीजों को जैसे का तैसा संज्ञानात्मक रूप से स्वीकार करने के बदले खुद करने के लिए प्रेरित करेगी। और यह ध्यान दिलाएगी कि 'क्या काम करता है क्या नहीं' इसके साथ ही यह क्रिया का आलोचनात्मक विश्लेषण, चिंतन तथा आत्मसात् करने में मदद करेगी। इसलिए शिक्षक-शिक्षा व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से कार्य करने के लिए तैयार करती है।

- 'शिक्षक' और 'शिक्षा' जैसे शब्दों के पारंपरिक अर्थ को बदले जाने की ज़रूरत है अगर सीखने को शिक्षक-शिक्षा के केंद्र में रखना है। क्योंकि शिक्षण में यह निश्चित होता है कि 'एक शिक्षक क्या करता है?' इससे यह ध्वनित होता है कि सीखना शिक्षण का परिणाम होता है। शिक्षक, शिक्षक के क्रियाकलापों और शिक्षक की तैयारी में बदलाव लाना ही होगा ऐसी परिस्थितियों के लिए जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी अलग ढंग से अलग-अलग स्तरों पर, अलग गति और शैली से साथ-साथ सीखता है।
- ऐसा सोचा गया कि सीखने वालों को स्वायत्तता देना प्रत्येक अधिगम अनुभव की अवस्था की उपयुक्तता सुनिश्चित करेगा। बेशक, शिक्षक-प्रशिक्षकों को अधिगम परिस्थितियों में सहभागी बनाने के लिए प्रशिक्षण की ज़रूरत है। साथ ही उन्हें शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम की दिनचर्या को संगठित करने के अच्छे तरीके आने चाहिए।
- शिक्षक-प्रशिक्षक को न केवल *पैराडाइम* बदलाव की समझ हो बल्कि वे इसके वाहक भी बनें। इसके लिए बेहतर अभिमुखीकरण कार्यक्रमों की आवश्यकता है जिसमें वे अपनी बदली हुई भूमिका को समझ सकें और उन परिस्थितियों के लिए तैयार हो सकें जिनमें सीखने वाले ही प्रभावी हों।
- हमारे देश में अलग-अलग विशिष्टताओं वाली विविध स्कूली व्यवस्थाएँ हैं, फिर भी वे राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न चरणों की स्कूली शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों में हिस्सेदारी निभाती हैं। शिक्षक को इन विविधताओं और इनकी अपेक्षाओं का अंदाज़ा होना चाहिए। इससे शिक्षक को किसी भी स्कूल व्यवस्था में समायोजन करने में और ठीक से काम करने में मदद मिल सकती है।

6.2.4 ज्ञान

- शिक्षक-शिक्षा में ज्ञान का अवयव शिक्षा अनुशासन के विस्तृत क्षेत्र से लिया गया है और इसे इसी तरह से दर्शाए जाने की ज़रूरत है। इसलिए ही शिक्षा के संदर्भ में इसकी प्रकृति बहु-अनुशासनिक है। दूसरे शब्दों में, शिक्षक-शिक्षा में अवधारणात्मक इनपुट इस तरीके से उच्चारित किए जाने चाहिए ताकि वे शैक्षिक घटनाओं–क्रियाकलापों, कार्यों, प्रयासों, प्रक्रियाओं, अवधारणाओं, घटनाओं इत्यादि का वर्णन कर सकें तथा इनकी व्याख्या कर सकें। अत: ऐसा करने के लिए अन्य संज्ञानात्मक विषयों से अवधारणाओं को लिया जा सकता है परंतु शैक्षिक घटकों की मिश्रित समझ के लिए इन्हें समाकलित करने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, सीखने संबंधी विविध सैद्धांतिक विचार जिन्हें आवश्यक रूप से मनोविज्ञान से लिया गया है इन्हें, इस तरह से देखने की जरूरत है कि ये शिक्षक को यह समझने के लिए कि अधिगम को कैसे समझा गया, कैसे इस पर चर्चा हुई, इसे कैसे पहचाना गया और सबसे ज़रूरी है कि यह कैसे हो सकता है, अवधारणात्मक आधार देता है। अर्थात् इस बात की समझ कि कैसे एक शिक्षक की अवधारणात्मक समझ उसके सीखने की परिस्थितियों के निर्माण के संबंध में लिए गए निर्णयों को प्रभावित करती है। इन निर्णयों के पीछे सैद्धांतिक व्याख्याएँ होती हैं। इसी तरह समाज में सदा बदलने वाले सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक दृष्टिकोण न केवल शिक्षक के बोध और धारणा को प्रभावित करते हैं बल्कि सीखने वालों के विचारों और प्रतिक्रियाओं को भी। इस तरह के अंतर्क्रियात्मक बलों को सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोणों की मदद से समझना होगा। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ऐसे प्रयास किए जाएँ कि शिक्षक-शिक्षा के

ज्ञान निर्माण के क्रम में व्याख्याओं के प्रस्तुतीकरण में शिक्षा का दृष्टिकोण हो न कि अन्य विषयों के शिक्षा संबंधी दृष्टिकोण 'शिक्षा में निहितार्थ' के साथ। कोशिश पहले से विद्यमान सिद्धांत से व्यवहार की बजाय व्यवहार से सिद्धांत की ओर जाने की हो।

- शिक्षक-शिक्षा में कई तरह के ज्ञान शामिल हैं उदाहरण के लिए, अवधारणात्मक, तकनीकी तथा पेशेवर इत्यादि।
- शिक्षक-शिक्षा में ज्ञान के विविध अवयव शुरुआत करने वाले के लिए स्पष्ट होने चाहिए जैसे विद्यार्थी, शिक्षक और शैक्षिक दृष्टिकोण जिसमें किसी के कार्यों को समझा जा सके और शिक्षक-शिक्षा के दौरान अधिगम को अधिक सार्थक, अर्थपूर्ण और उपयोगी बनाया जा सके।
- इस प्रकार की व्यवस्था पर्याप्त अवसर देती है सैद्धांतिक और व्यावहारिक पहलू को अलग-अलग देखने के बजाय एक साथ समाकलित रूप में देखने के। इससे शिक्षक में क्षेत्र-अभ्यासों संबंधी आलोचनात्मक संवेदनशीलता का विकास होगा। ये वे अभ्यास हैं जिन्हें प्रयोग में लाया गया है और जो शिक्षकों में सीखने की आदर्श परिस्थिति की अपनी दृष्टि के विकास में मदद करते हैं। इस तरह समर्थ और सक्षम शिक्षक अच्छा अधिगम वातावरण देनेवाला बन जाता है जो यांत्रिक रूप से विद्यमान परिस्थितियों से समायोजन ही नहीं करता बल्कि उन्हें सुधारने का प्रयत्न भी करता है और उसमें आवश्यक तकनीकी जानकारी तथा आत्मविश्वास भी होता है।

6.2.5 सामाजिक संदर्भ

- शिक्षा पर उस परिवेश का बड़ा प्रभाव होता है जिससे शिक्षक और विद्यार्थी आते हैं। स्कूल और कक्षा के सामाजिक संदर्भ का सीखने की प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसे देखते हुए विद्यार्थी के मनोवैज्ञानिक पहलुओं की जगह उसके सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भों पर अधिक ज़ोर दिया जाना चाहिए।
- संदर्भ बदलने पर सीखने की प्रक्रिया में भी अंतर आता है। स्कूली शिक्षा और सीखना दोनों बाहर के बड़े सामाजिक संदर्भों से प्रभावित होते हैं तथा बढ़ते हैं।
- शिक्षा केवल एक संस्थान के अंदर अवकल्पित उद्देश्य तक सीमित नहीं होती। बाहर के ज्ञान को स्कूल के भीतर के ज्ञान से जोड़ा जाए तो वह बहुत मूल्यवान हो सकती है।
- ऐसी शिक्षा को बढ़ावा देना चाहिए जो सामाजिक और रोज़मर्रा के संदर्भों से जुड़ी हो। साधारणत: शैक्षिक चिंतकों जैसे गांधी, टैगोर, गिजूभाई, डिवी एवं अन्य द्वारा व्यक्त कई विचारों को उनके सामाजिक, ऐतिहासिक संदर्भों को समझे बिना जिसमें वे विकसित होते हैं, पढ़ा जाता है।
- शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में आधुनिक भारतीय समाज के मुख्य मुद्दों जैसे समाज का बहुलतावादी स्वभाव और अस्मिता के मुद्दे, जेंडर, समानता और गरीबी को महत्त्व दिया जाना चाहिए। इससे शिक्षकों को शिक्षा को संदर्भित करने में सहूलियत होगी और शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों की गहरी समझ और समाज से उसके संबंधों का बोध भी हो सकेगा।

6.2.6 मूल्यांकन

- यह समझने की आवश्यकता है कि सीखने का मूल्यांकन एक गतिशील प्रक्रिया है जिसमें पर्याप्त संवेदनशीलता और लचीलापन होना चाहिए ताकि यह अनुमान हो सके कि विद्यार्थी ने वास्तव में क्या सीखा है।
- नए शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में मूल्यांकन की प्रक्रिया सतत हो, ऐसा सुझाव है। शिक्षक-प्रशिक्षक विद्यार्थी-शिक्षकों का मूल्यांकन उनके गुणों जैसे सहयोग और सहभागिता, अन्वेषण और एकीकरण के आधार पर करते हैं। साथ ही लिखित व मौखिक कौशलों, उनकी शैली तथा प्रस्तुतीकरण में नवीनता आदि के आधार पर भी मूल्यांकन किया जाता है।
- मूल्यांकन कई प्रकार के होते हैं जैसे स्व-मूल्यांकन, पियर मूल्यांकन, शिक्षक का सकारात्मक फ़ीडबैक

तथा वर्ष के अंत में किया गया औपचारिक मूल्यांकन। इन सभी मूल्यांकनों का उद्देश्य है विद्यार्थी-अध्यापक अपनी कमियों और अच्छाइयों को समझ सकें और यह समझ सकें कि उसमें क्या सुधार लाया जा सकता है तथा सीखने की प्रक्रिया का अगला लक्ष्य भी निर्धारित कर सकें।

- मूल्यांकन आमतौर पर गुणात्मक होगा न कि मात्रात्मक जिससे कि लगातार यह प्रक्रिया सतत हो और विविध गतिविधियों में उनकी निष्पत्ति के आधार पर उनका स्थान तय होगा।

7. नए शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम के लिए आवश्यक समझे जाने वाले कार्य

नए शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम जिसमें से एक की ऊपर चर्चा की गई है, के लिए कुछ उपाय अपनाए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए केवल शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम के वर्तमान में पाठ्यचर्या संबंधी बिंदुओं का पुनर्निर्धारण ही काफ़ी नहीं होगा। बल्कि यहाँ तो शिक्षक-शिक्षा के सैद्धांतिक आयामों को खुलकर रखे जाने की आवश्यकता है। यह शिक्षा के दृष्टिकोण से होना चाहिए। इसके आगे, इसकी पहचान की जानी चाहिए कि शिक्षा में अध्ययन-अध्यापन का केंद्रीय महत्त्व होता है। इसमें कोई शक नहीं कि ऐसी सैद्धांतिक रूपरेखा पर उसकी परिचालन की विस्तृत रूपरेखा बनेगी। ऐसा करने में लाए जाने वाले मुख्य बदलाव निम्नांकित हैं :

1. शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में अधिगम अनुभव मुख्य रूप से विद्यार्थी प्रधान होंगे क्योंकि ये अनुभव उन्हें सीखने के ऐसे नए आयामों से परिचित कराएँगे जिनमें तरह-तरह की अधिगम परिस्थितियाँ शामिल होंगी जो सीखने में विविधता, अपसारी सोच, चिंतन और सीखने वाली परिस्थितियों के साथ सूक्ष्मदृष्टि के साथ बरताव को बढ़ावा देंगी। साथ ही विद्यार्थियों की सामाजिक विषमताओं, असमानता, लिंग-भेद तथा प्रशासनिक एवं व्यवस्थाजन्य विषमताओं जैसे बड़े मुद्दों का तर्कसम्मत ढंग से मूल्यांकन करने का भी अवसर देंगी। ये सभी बातें हर शिक्षक को शिक्षण को एक व्यवसाय के रूप में देखने और उसकी व्यावसायिक प्रतिबद्धता के लिए मदद देंगी।
2. शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में शिक्षक की वे क्षमताएँ जो सामान्य मौखिक और शाब्दिक क्षमताओं से परे होती हैं तथा जिनकी सहभागिता आधारित शिक्षा में आवश्यकता है, को विकसित किया जाना शामिल होना चाहिए। उनमें से कुछ क्षमताएँ हैं–

जानकारी के स्रोतों की पहचान करना जिनकी आवश्यकता विद्यार्थियों को सीखने संबंधी गतिविधियों को बनाने के लिए पड़ती है तथा ऐसे स्रोतों को विभिन्न आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को उपलब्ध कराना:

- विभिन्न विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग गतिविधियाँ।
- विद्यार्थियों के लिए पठन सामग्री। समूह या व्यक्ति आधारित समस्या सुलझाने का लक्ष्य। अध्ययन का उपयोग और अनुभव का लाभ। विद्यार्थियों को इस तरह की अनुक्रिया देना बिना उत्तर या हल के, जो उन्हें आगे सोचने के लिए बढ़ावा दे।
- विद्यार्थियों की तर्क क्षमता का इस तरह विकास कि उससे उसे खोज करने तथा उसे बढ़ावा देने में सहयोग मिले।
- शुद्धता का फैसला किए बिना विभिन्न प्रकार के जवाबों को सुनना।

3. जिन प्रवृत्तियों की ऊपर चर्चा की गई है वे विद्यार्थी-अध्यापकों में अनुभव कराने से ही धीरे-धीरे विकसित होंगी, इनके बारे में पढ़ने या इन पर भाषण सुनने से नहीं। इसके लिए, विभिन्न प्रकार के अनुभव जो इन्हें न केवल कार्यजगत को पहचानने और समझने में सक्षम बनाते हैं वरन् इन्हें वांछित अधिगम सदर्भों की 'उत्तम कल्पना' भी प्रदान करते हैं। ऐसा इसलिए कहा गया है क्योंकि देश के अधिकांश स्थानों में विद्यार्थी-शिक्षक को दिए गए अनुभव ऐसे नहीं होते जो उन्हें प्रेरणा दें। कुछ विद्यालय औरों की तुलना में अधिक व्यवस्थित होते

हैं परंतु परीक्षा पुराने ढंग से ही ली जाती है। अत: ऐसी कल्पना की गई है कि शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम के दौरान अनेक प्रकार के अनुभव प्रचुर मात्रा में कराए जाएँ जिससे विद्यार्थी-अध्यापक देखने, सोचने, विचार-विमर्श करने, जाँचने, समझने तथा अधिगम स्थितियाँ 'क्या और कैसे' हों इस पर निर्णय ले सके। इसके लिए कुछ सकारात्मक तथा संभव स्थितियों को पैदा करना होगा, ऐसा कदाचित् कृत्रिम स्थितियों की कल्पना आदि के द्वारा किया जा सकता है अथवा इनकी संप्रत्यात्मक व्याख्या पर पर्याप्त विमर्श, साथ ही संदर्भ सामग्री एवं वास्तविक अभ्यास का भी सहारा लिया जा सकता है।

4. सांस्थानिक तौर पर नया शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम बदली हुई व्यवस्था की माँग करता है। इस अर्थ में इसके कार्यान्वयन के लिए आवश्यक पाठ्यचर्या विवरण तैयार किये जा सकते हैं। प्रासंगिक अवस्थाओं के स्कूलों के साथ अधिक जुड़ाव ज़रूरी होगा। पाठ्यचर्या का आदान-प्रदान न केवल अधिगम की प्रकृति, गति और शैली में विविधता लिए होगा बल्कि अपेक्षाओं के प्रकार और सुविधाओं में भी। शिक्षक-प्रशिक्षक की भूमिका अधिगम को सहज बनाने वाली होगी न कि ऐसी जैसे एक शिक्षक मात्र कोई कोर्स पढ़ा रहा है। आकलन के लिए भी ज़ोर प्रक्रिया में भागीदारी पर ज़्यादा होगा न कि परिणामों पर। इस कार्यक्रम को विद्यार्थी-शिक्षकों को इस तरह के अनुभव देने होंगे जिसमें वे स्वयं खोजें, चिंतन करें, आलोचनात्मक मूल्यांकन, प्रयोग तथा स्वयं द्वारा लिए गए निर्णय की जिम्मेदारी। ये सभी अनुभव उन्हें स्कूलों में प्रभावी ढंग से कार्य करने में समर्थ बनाते हैं। कार्य क्षेत्र के विविध अभ्यासों तथा अतीत के अनुभवों से अर्थपूर्ण दृष्टि प्राप्त की जा सकती है।

5. इस प्रकार के विद्यार्थी-आधारित वैविध्यपूर्ण पाठ्यक्रम की संभावना आज आई.सी.टी. के कारण बढ़ गई है। सार्थक तरीके से आई.सी.टी. का उपयोग शिक्षकों के लिए रोचक प्रोजेक्ट की रचना करने, समस्या सुलझाने की परिस्थितियों का निर्माण करने तथा प्रभावी अधिगम परिस्थितियों के कृत्रिम अनुभव देने में मदद कर सकता है। वास्तव में शिक्षकों को उन प्रभावी अधिगम स्थितियों का अनुभव दिया जा सकता है जो उन्होंने विविध सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में निर्मित की हैं। इन सफल प्रयोगों पर उपलब्ध सामग्री को खोजा जा सकता है। उन स्थानों पर जहाँ विद्यार्थी-शिक्षकों को अर्थपूर्ण अनुभव देना कठिन है, यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण अनुभव होगा।

6. शिक्षा के क्षेत्र में मास मीडिया, आई.सी.टी. और उपग्रह-आधारित टीवी के शामिल हो जाने से शिक्षक की भूमिका और महत्त्वपूर्ण हो गई है। अधिगम परिस्थितियों के निर्माण के क्षेत्र में कई लोगों की भागीदारी होने से शिक्षकों की नई दक्षताओं की माँग बढ़ गई है ताकि उनसे सार्थक ढंग से मदद ली जा सके। शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिसमें विद्यार्थी-शिक्षक को विभिन्न प्रकार की अधिगम परिस्थितियों में काम करना सिखाया जाए।

7. जैसा कि अभिकल्पित है यदि उसी तरह का बदलाव आये तो बदले हुए अभ्यास शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों में पर्याप्त और सुव्यवस्थित बदलाव ला सकेंगे और उससे नई जमीन तैयार होगी। इससे सेवाकालीन प्रशिक्षण का माहौल भी बदलेगा, क्योंकि नए शिक्षक की आवश्यकताएँ अलग होंगी। इस परिस्थिति में "सेवा-पूर्व और सेवाकाल में अपने आप मजबूत संबंध हो जाएगा।" यह एक जानी हुई बात हो जाएगी। इससे सेवाकाल कार्यक्रम पूरी तरह शिक्षक विकास कार्यक्रम होगा, और इस अर्थ में शिक्षक के लिए यह जीवनपर्यंत शिक्षा होगी।

संक्षिप्त में नया शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम विद्यालयी व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों के प्रति ज्यादा उत्तरदायी होगा क्योंकि यह सार्थक पैराडाइम बदलाव लेकर आयेगा। कुछ मुख्य बदलाव नीचे इंगित किए गए हैं :

बदलाव	
से	**की ओर**
शिक्षक केंद्रित, स्थिर डिजाइन	• विद्यार्थी केंद्रित, लचीली प्रक्रियाएँ
शिक्षक के निर्देश और निर्णय	• विद्यार्थी की स्वायत्तता
शिक्षक का मार्गदर्शन और प्रबोधन	• सीखने को सरल (आसान) बनाना।
समूह में सीखना	• सहयोगी अधिगम
विद्यार्थी ग्रहणशीलता	• सीखने में विद्यार्थी की भागीदारी
'दिया गया' स्थिर ज्ञान	• विकसित होता ज्ञान
रैखिक अनुभव	• विविध अनुभव
सीखने के एक जैसे (आम) कार्य	• सीखने के व्यक्तिगत तरीके
विषय केंद्रित	• बहुविषय केंद्रित, शिक्षा केंद्रित

8. अनुशंसाएँ

शिक्षक-शिक्षा की पाठ्यचर्या और प्रक्रिया के पुनर्योजन की आवश्यकता को दोहराते हुए, जैसी कि विभिन्न शिक्षा आयोगों ने अनुशंसा की है, यह आधार पत्र स्कूली पाठ्यचर्या नवीकरण की प्रक्रिया के संस्थानीकरण करने में शिक्षक की भूमिका को एक सक्रिय 'एजेंसी' के रूप में देखता है। यह तर्क दिया जा सकता है कि चिंतनशील शिक्षकों को तैयार किए बिना स्कूली शिक्षा में बदलाव लाने के उद्देश्य से स्कूली पाठ्यचर्या की समीक्षा का अभ्यास सफल नहीं हो सकता। आगामी खंड में संरचनात्मक और व्यावहारिक तौर-तरीकों के संबंध में कुछ प्रमुख अनुशंसाएँ रखी गई हैं जिनकी स्कूली पाठ्यचर्या नवीकरण संबंधी शिक्षक-शिक्षा के सरोकारों के संदर्भ में आवश्यक है–

1. सभी प्रकार के शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम– पूर्व-प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक को विश्वविद्यालयों से संबद्ध कर दिया जाना चाहिए।
2. शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम को लागू करते हुए प्रशिक्षकों, विद्यार्थी-शिक्षकों और शिक्षकों को पूरी आज़ादी दी जानी चाहिए कि इसके लिए उनको जो भी उपयुक्त लगे, कर सकते हैं।
3. 10+2 स्तर की पढ़ाई के बाद शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम सिद्धांतत: पाँच वर्षों की अवधि का होना चाहिए।
4. शिक्षक-शिक्षा के एक एकीकृत ढाँचे में ऐसे मूल घटक शामिल हो सकते हैं जो संपूर्ण शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम– पूर्व प्राथमिक, प्रारंभिक तथा माध्यमिक स्तर में समान रूप से लागू हों जिसके बाद शिक्षा के विशिष्ट चरण में व्यावसायिक विकास की विशेषज्ञता का भी प्रावधान हो।
5. एन.सी.टी.ई, एन.सी.ई.आर.टी. जैसी राष्ट्रीय संस्थाओं और उनकी राज्य स्तर की सहयोगी संस्थाओं की पूर्व-लिखित कार्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उनके द्वारा समन्वयन की आवश्यकता है तथा उन्हें इस तरह की प्रक्रियाओं के लिए पहल भी करनी चाहिए। उनके लिए आवश्यक है कि वे व्यक्ति एवं संस्थाओं को प्रोत्साहित करें जो इस तरह के एक या दो कार्यों को आगे बढ़ाने में पहल लें। उनका मुख्य लक्ष्य, इस क्षेत्र में बदलाव के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करना है। नई व्यवस्था के सफल कार्यान्वयन के लिए समुचित सहायक संसाधनों को उपलब्ध कराना है।
6. शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम को इस तरह से पुनर्निर्मित किए जाने की आवश्यकता है कि वे स्कूल पाठ्यचर्या के नवीकरण की प्रक्रिया और अपने क्षेत्र विशेष के संदर्भ में प्रासंगिक हो सकें।

7. इस आधार पत्र में प्रस्तावित शिक्षक-शिक्षा का प्रक्रिया आधारित मॉडल शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों का मुख्य आधारिक ढाँचा बनना चाहिए जिस पर शिक्षा के पूर्व-प्राथमिक, प्रारंभिक तथा माध्यमिक स्तरों के शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों का पुनः निर्माण किया जाए सभी राज्यों और जिलों में एस.सी.ई.आर.टी./डी.आई.ई.टी. (डाइट) को विश्वविद्यालयी संस्थानों से जोड़ते हुए।
8. एन.सी.ई.आर.टी. और एन.सी.टी.ई. के बीच उच्च स्तरीय सलाहकार संबंध हों ताकि स्कूली पाठ्यचर्या और शिक्षक-शिक्षा को जोड़ा जा सके और इस विकसित प्रक्रिया का नवीकरण किया जा सके।
9. स्कूली पाठ्यचर्या नवीकरण के संदर्भ में राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षक-शिक्षा पाठ्यचर्या की समीक्षा की आवश्यकता है।
10. नव अभिकल्पित शिक्षक-शिक्षा तथा विकास के कार्यान्वयन के लिए संभावित रणनीति के विकास की परिचर्चा के लिए राष्ट्रव्यापी सेमिनार तथा कार्याशालाएँ आयोजित की जानी चाहिए।

उपसंहार

स्वातंत्र्योत्तर भारत में शिक्षा ने बहुतों के लिए सामाजिक बहिष्करण के उपकरण के रूप में काम किया है, समतामूलक समाज के संवैधानिक लक्ष्यों से उन्हें और अधिक दूर करते हुए। अतः स्कूली पाठ्यचर्या के नवीकरण का यह प्रयास ऐसी शिक्षा व्यवस्था को स्थापित करने के संदर्भ में स्थित होना चाहिए जो भारतीय समाज की संवैधानिक दृष्टि के अनुकूल केंद्रिक मूल्यों और रूपांतरण करने वाले लक्ष्यों पर आधारित हो।

1990 के दशक में बहुत-से नवाचारों और शैक्षिक सुधारों का फोकस बच्चे की प्रकृति को महत्त्व देने की आवश्यकता पर था। यही नहीं उसके सीखने की गति और उसे शिक्षा में उपयुक्त स्थान देने की बात काफ़ी पुरज़ोर तरीके से कही जाती थी। लेकिन भारत में विद्यालीय शिक्षा को पुनर्जीवित करने की आशा चाहे वह आदर्शवादी प्रयासों के द्वारा हो या सैद्धांतिक प्रयासों के द्वारा, बहुत कम सफलता मिलेगी अगर शिक्षक की केंद्रीय भूमिका न पहचानी गई।

इसके साथ उन विविध बाधाओं को भी पहचाना जाना चाहिए जिसका सामना एक औसत शिक्षक करता है: सामाजिक, सांस्कृतिक, कौशल तथा जेंडर-आधारित। शिक्षक की दक्षताओं, कौशलों, ज्ञान और दृष्टिकोण में रूपांतरण तथा स्कूल के वातावरण में बदलाव एक प्रबुद्ध पाठ्यचर्या के आदान-प्रदान के लिए पहली शर्त है न कि इसके विपरीत जैसा कि आज माना जाता है। इस तरह के अभ्यास को साकार करना बहुत आसान नहीं होगा जैसा कि शिक्षक-शिक्षा को रूपांतरणीय पेशे के रूप में बदलने की अधूरी कोशिश में देखा गया है। इसके लिए बड़े पैमाने पर संरचनात्मक तथा प्रक्रियात्मक बदलावों की आवश्यकता है जिन्हें इस आधार पत्र में रेखांकित किया गया है।

परिशिष्ट I

स्वतंत्रता-पूर्व काल में शिक्षा में हुए नवाचारों के उदाहरण

1. गिजुभाई बधेका पूर्व-प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, दक्षिणमूर्ति, भावनगर, गुजरात-1920

श्री गिजुभाई बधेका (1885-1939) ने ऐसी शिक्षा-व्यवस्था का विकास किया जिसके मुख्य अवयव थे: बच्चों के प्रति स्नेह और बच्चों को आज़ादी। उन्होंने बच्चे को शिक्षा का केंद्र बनाया। शिक्षक और विषय की तुलना में विद्यार्थी को प्राथमिकता देना उन्होंने महत्त्वपूर्ण समझा। बच्चों की आज़ादी के पक्ष में और स्कूलों में प्रचलित बच्चों को डरा-धमका कर या दंडित करने की प्रवृत्ति के ख़िलाफ़ आज से 85 वर्ष पूर्व उन्होंने आवाज़ उठाई थी। उन्होंने 1920 में एक-पूर्व प्राथमिक विद्यालय आरम्भ किया जिसे नाम दिया बाल मंदिर और ऐसे वातावरण का निर्माण किया जो दोस्ताना व प्रेम से भरा था। उस वक्त के प्रचलित पारंपरिक वातावरण से अलग नया वातावरण बनाने का यह एक बड़ा प्रयास था।

बच्चों को शिक्षित करने की उनकी प्रक्रिया के मूल में था—बच्चे को स्वतंत्रता, आत्मनियंत्रण और आत्मविकास के लिए तैयार करना। गिजुभाई बच्चों के विचारों और भावनाओं को सम्मान देते थे। शैक्षणिक सामग्री के रूप में उन्होंने संगीत, कहानी, नाटक आदि का उपयोग किया। बच्चे बड़ी ही रुचि व ध्यान से स्वच्छता, शांति, अनुशासन, दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करना और सहपाठियों के प्रति प्रेम आदि के पाठ सीखते। उन्होंने हरेक बच्चे को खुली छूट दे रखी थी कि वह जो चाहे करे। उन्होंने बाल मंदिर के माध्यम से कई तरह के नए प्रयोग कर ज्ञान, पद्धति, सामग्री आदि का विकास किया। उन्होंने बच्चों की शिक्षा के पूरे परिदृश्य में क्रांति-सी ला दी। वास्तव में यह सब उन्होंने बच्चों का अवलोकन कर और प्रयोगों द्वारा किया।

उनकी किताब 'दिवास्वप्न' प्राथमिक शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए रोडमैप अर्थात् मार्ग-नक्शा सा है। इसमें उन्होंने बताया है कि कैसे कोई शिक्षक स्कूल में पढ़ाए जाने वाले विषयों मसलन भाषा, इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदि के शिक्षण में बड़े बदलाव ला सकता है और साथ ही बच्चों को स्वच्छता, व्यवहार, समूह में सीखना, प्रतियोगिता के लिए नहीं बल्कि मजा लेने के लिए खेलना, पढ़ना, बिना शोर किए गतिविधियाँ करना और व्यवस्थित रहना और तमाम तरह के ज़रूरी क्रियाकलाप सिखा सकता है।

वे मैडम मोंटेसरी के कार्यों से प्रभावित थे लेकिन उन्होंने उनके विचारों व पद्धति को भारतीय संस्कृति के अनुरूप ढालकर ही लागू किया । साथ ही उन्होंने मारिया मांटेसरी के कहानी के माध्यम से पढ़ाने के तरीके में बदलाव लाते हुए खुद ही बच्चों के लिए कहानियों की किताबें लिखीं।

2. रवीन्द्रनाथ टैगोर ने पश्चिम बंगाल में 1921 में शांतिनिकेतन की स्थापना की

रवीन्द्रनाथ टैगोर (1861-1941) एक जीनियस थे और महज़ कला की दुनिया में ही नहीं बल्कि राष्ट्र निर्माण की कई रचनात्मक धाराओं में उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने शिक्षा को राष्ट्र-निर्माण के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण व प्रमुख कारक कहा। शांतिनिकेतन में एक पथप्रदर्शक के रूप में उन्होंने अपने जीवन के सर्वोत्तम समय में शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यवान प्रयोग किये (1921)। भारत के पुनर्निर्माण में अपने पूर्ण योगदान के लिए शांतिनिकेतन को समर्थ बनाने हेतु उन्होंने सभी तरह की आर्थिक कठिनाइयों को सहा और सभी तरह के व्यक्तिगत त्याग किए।

शांतिनिकेतन का उद्देश्य था पूरब व पश्चिम की संस्कृतियों की अच्छाइयों का संगम, जहाँ ईश्वर की सभी रचनाएँ एक छत के नीचे हों *(यात्रा विश्वम् भवति एका निदम)।*

वे महान देशभक्त थे और उनमें गाँवों के उद्धार के लिए दृढ़ इच्छा थी। वे गाँव की आत्मशक्ति को जगाना चाहते थे जिससे वे समृद्धि हासिल कर सकें। इस तरह के कई प्रयोग शांतिनिकेतन में किए गए।

वे तत्कालीन पाश्चात्य शिक्षा व्यवस्था से घोर असंतुष्ट थे। उनके अनुसार तत्कालीन व्यवस्था कमज़ोर पाठ्यचर्या के साथ (अमेरिका व ब्रिटेन) परीक्षोन्मुख किताबी शिक्षा मात्र प्रदान करने पर बल देती है जो रटने वाली पद्धतियों व नकल करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है।

उन्होंने स्वतंत्रता व खेलों को सभी तरह के सीखने का आधार माना।

उनके विचार से शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा की जगह माँ के दूध की तरह थी इसलिए उच्च स्तर तक शिक्षण का माध्यम मातृभाषा होनी ही चाहिए। क्योंकि उनका विश्वास था कि पढ़ाने या आत्माभिव्यक्ति के लिए मातृभाषा की जगह कोई भाषा नहीं ले सकती।

पढ़ाने का तरीका ऐसा था कि किसी प्रकार का दबाव महसूस न हो और पाठ्यचर्या भी न्यूनतम थी।

लड़के-लड़कियों की एक साथ शिक्षा को उन्होंने बढ़ावा दिया जो उन दिनों एक बहुत बड़ा कदम था।

वहाँ कला को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था।

उनके शैक्षिक विचारों को दार्शनिक विचारों ने प्रभावित किया खासकर उपनिषद् ने। पूरा विश्व एक सर्वशक्तिमान शक्ति की अभिव्यक्ति है, जो पूरे समय और ब्रह्मांड में फैला हुआ है। यही कारण है कि उन्होंने विविधता में एकता को देखा।

उनका यह भी मानना था कि प्रत्येक वस्तु में एक दैवीय चेतना है, इसी कारण रवीन्द्रनाथ टैगोर ईश्वर की बनाई सभी वस्तुओं तथा सभी प्राणियों से प्यार करते थे। मनुष्य और प्रकृति के बीच आध्यात्मिक संयुक्ति ही उनकी शैक्षिक संकल्पना का सार था। बच्चों को शुद्ध प्रकृति की गोद में स्वतंत्र वातावरण में बढ़ना चाहिए ऐसा उनका विचार था।

3. महात्मा गांधी ने प्राथमिक स्तर के लिए बुनियादी शिक्षा योजना 1937 में वर्धा, महाराष्ट्र में लागू की

महात्मा गांधी ने वर्गहीन, शांतिप्रिय एवं शोषण रहित समाज की संकल्पना की थी। एक ऐसा समाज जो प्रेम, अहिंसा, सत्य तथा न्याय से परिपूर्ण हो। केवल ऐसे ही समाज में व्यक्ति अपनी संपूर्ण शक्तियों तथा आध्यात्मिकता का विकास कर सकता है।

उनके लिए शिक्षा का अर्थ बच्चों की शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का सम्यक् विकास करना था। उनका विश्वास था कि गंभीर शिक्षा द्वारा उपयोगी नागरिक का विकास होना चाहिए-संपूर्ण पुरुष एवं स्त्री के रूप में, जिनमें मानव जीवन के चारों पक्षों हाथ, मस्तिष्क, हृदय तथा आत्मा का समरस विकास सम्मलित हो। उनका पूर्ण विश्वास ऐसी शिक्षा में था जिसके द्वारा ऐसे समाज का निर्माण किया जा सकता है।

वे दृढ़तापूर्वक विश्वास करते थे कि पाश्चात्य शिक्षा (उनके समय की) भारत की स्वदेशी संस्कृति से संबद्ध नहीं है। उनका यह भी विश्वास था कि पाश्चात्य शिक्षा का जीवन से कोई संबंध नहीं है और यह न सिर्फ बेकार है बल्कि हानिकारक भी है।

वे आश्वस्त थे कि भारत का सामाजिक, नैतिक एवं आर्थिक नवनिर्माण सही प्रकार की शिक्षा पर आश्रित है। केवल शिक्षा ही सत्य तथा न्याय पर आधारित शान्तिपूर्ण अहिंसात्मक समाज निर्मित करने में सक्षम है। उनके शैक्षिक दर्शन के मुख्य सिद्धांत थे :

1. शिक्षा शिल्प (क्राफ्ट) आधारित होगी।
2. यह स्वावलंबी होनी चाहिए।
3. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।
4. चौदह वर्ष तक की आयु तक हर बच्चे के लिए शिक्षा (प्राथमिक शिक्षा) नि:शुल्क तथा अनिवार्य होनी चाहिए।

उनकी शिल्प केंद्रित शिक्षा की दलील की व्यापक रूप से निंदा की गई। उनका सुदृढ़ मत था कि कार्य से शरीर प्रशिक्षित होगा, बुद्धि उद्दीप्त होगी, मस्तिष्क प्रशिक्षित होगा तथा बच्चे स्वावलंबी तथा स्वतंत्र बनेंगे। इससे बच्चों में श्रम के प्रति गरिमा जागृत होगी तथा यह कामकाजी निर्धन तथा काम न करने वाले व्यक्तियों के बीच के अंतर को कम करेगी। इस प्रकार उनकी कार्य प्रधान शिक्षा योजना मूक, दूरगामी परिणाम वाली सामाजिक क्रांति पर केंद्रित है।

मातृभाषा के माध्यम से दी गई शिक्षा बच्चों को उनके आसपास के वातावरण से परिचित कराएगी तथा उन्हें भारतीय संस्कृति को आसानी से आत्मसात् करने में मदद करेगी। अग्रेज़ी तभी पढ़ाई जानी चाहिए जब बच्चा मातृभाषा में निपुणता प्राप्त कर ले और वह चौदह वर्ष का हो चुका हो।

उन्होंने सात वर्षों (7 से 14 वर्ष के आयु वर्ग) की पाठ्यचर्या में निम्नलिखित विषयों को शामिल करने की सिफारिश की:

1. मातृभाषा
2. बुनियादी क्राफ्ट (शिल्प क्राफ्ट)
3. गणित
4. विज्ञान-प्रकृति अध्ययन, वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान, शरीर विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, शारीरिक संस्कृति (फिज़ीकल कल्चर), रसायन शास्त्र, तारों की थोड़ी सुसंगत जानकारी
5. समाजिक अध्ययन– इतिहास, भूगोल और नागरिक शास्त्र
6. हिन्दी का अध्ययन

उन्होंने अध्यापकों के प्रशिक्षण का भी विस्तार से वर्णन किया तथा इसमें निम्न को शामिल किया :

1. एक बुनियादी क्राफ्ट
2. शिक्षा के सिद्धांत
3. गणित
4. शरीर विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान तथा स्वच्छता आदि में संक्षिप्त पाठ्यक्रम
5. सामाजिक अध्ययन– इतिहास, भूगोल तथा नागरिक शास्त्र में एक संक्षिप्त कोर्स
6. विद्यार्थी-अध्यापकों को उनकी मातृभाषा में साहित्य की उच्च कलाकृतियों के माध्यम से सामान्य सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से परिचित कराना।
7. हिंदी
8. उनके सामाजिक वातावरण से संबंधित विभिन्न समस्याओं से उन्हें अवगत कराना।
9. शारीरिक, सांस्कृतिक, कसरत, स्वदेशी खेल, पर्यवेक्षी शिक्षण अभ्यास।

महात्मा गांधी के शिक्षा दर्शन को डॉ. जाकिर हुसैन ने जामिया मिलिया इस्लामिया में लागू किया।